योगविद्या

वर्ष 10 अंक 1
जनवरी 2021
सदस्यता डाकखर्च – रु100

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरि: ॐ

योगविद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है। देर से सदस्यता ग्रहण करने पर भी उस वर्ष के जनवरी से दिसम्बर तक के सभी अंक भेजे जाते हैं।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2021

पत्रिका की सदस्यता एक वर्ष के लिए पंजीकृत की जाती है। कृपया अपने आवेदन अथवा अन्य पत्राचार निम्नलिखित पते पर करें –

बिहार योग विद्यालय
गंगा दर्शन,
फोर्ट, मुंगेर, 811201
बिहार

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु स्वयं का पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।

कुल पृष्ठ संख्या : 56 *(कवर पृष्ठों सहित)*

कवर एवं अन्दर के रंगीन फोटो : नववर्ष दिवस 2021, मुंगेर

आध्यात्मिक मार्गदर्शन

नववर्ष संकल्प

इस नववर्ष में एक नवीन जीवन प्रारम्भ कीजिए। अपने दोषों-दुर्बलताओं पर विजय प्राप्त करिए। इसी वर्ष एक सच्चे साधक और योगी बनने का दृढ़ संकल्प करिए।

नववर्ष आपके सामने एक नवीन पुस्तिका की भाँति है। इस पुस्तिका के एक नूतन पृष्ठ पर प्रेम एवं एकत्व के सन्देश को अंकित कीजिए। इस पृष्ठ पर स्वर्णिम अक्षरों में लिखिए – केवल प्रेम द्वारा ही घृणा पर विजय प्राप्त की जा सकती है तथा मानव की सेवा ईश्वर की आराधना है। अपने समक्ष उच्च प्रेम, भ्रातृत्व, करुणा एवं क्षमा के आदर्श को सदैव रखिए। अपने प्रत्येक शब्द एवं कर्म में इन आदर्शों को अभिव्यक्त करिए तथा इस नववर्ष को एक दिव्य नवीन युग के अवतरण का माध्यम बनाइए।

– श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर–811201, बिहार के लिए स्वामी शिवध्यानम् सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित
मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद–121007, हरियाणा
स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

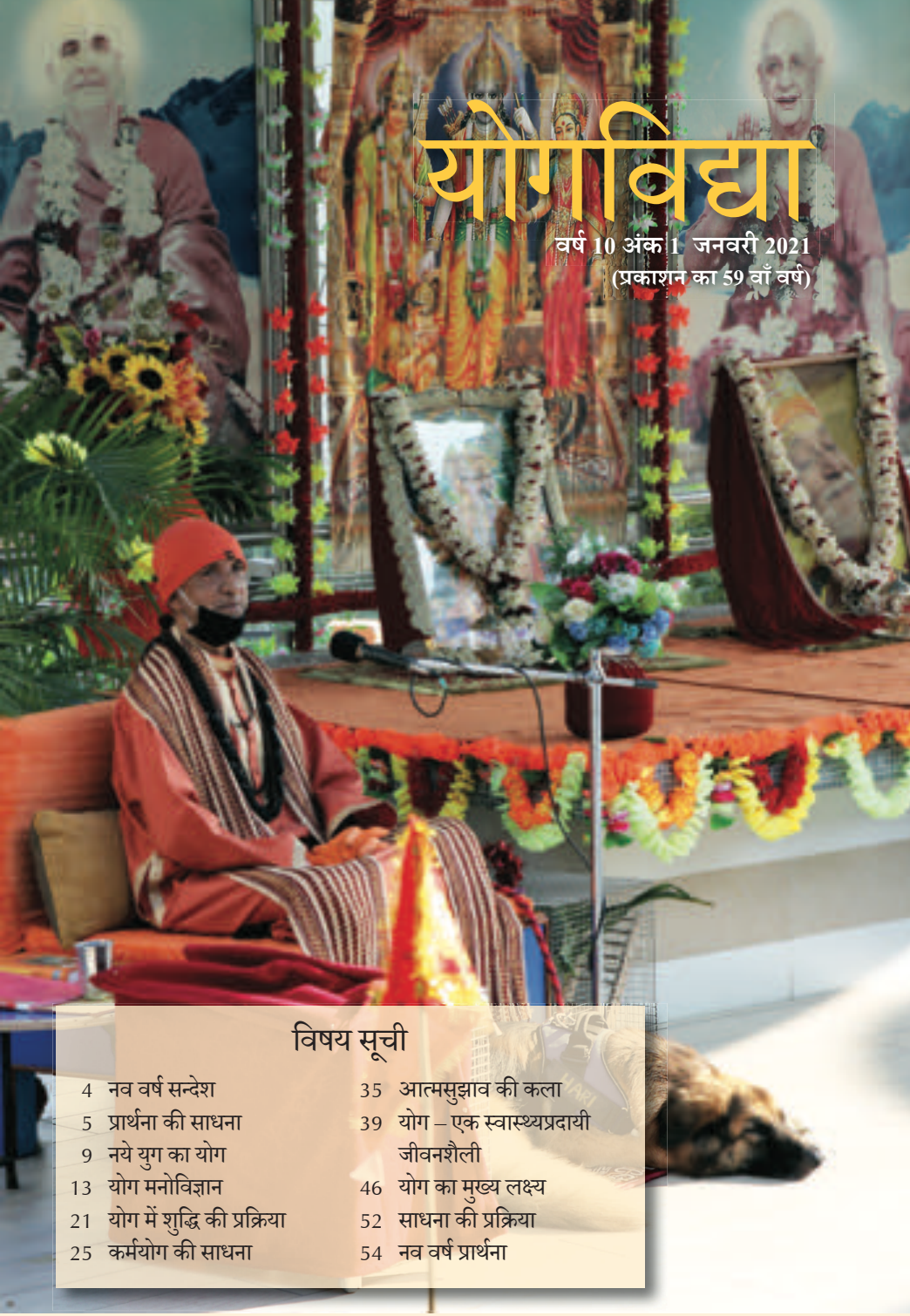

योगविद्या

वर्ष 10 अंक 1 जनवरी 2021
(प्रकाशन का 59 वाँ वर्ष)

विषय सूची

4 नव वर्ष सन्देश
5 प्रार्थना की साधना
9 नये युग का योग
13 योग मनोविज्ञान
21 योग में शुद्धि की प्रक्रिया
25 कर्मयोग की साधना
35 आत्मसुझाव की कला
39 योग – एक स्वास्थ्यप्रदायी जीवनशैली
46 योग का मुख्य लक्ष्य
52 साधना की प्रक्रिया
54 नव वर्ष प्रार्थना

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

नव वर्ष सन्देश

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

'नये वसन्त के नये पात, नये फूल, नयी डाल' पिछले साल के जीर्ण-शीर्ण पत्तों को झकझोर कर गिरा दो। नया साल नया फूल देगा। जीवन के पुराने पन्ने फाड़ दो, आध्यात्मिक जीवन शुरू हो, निराशाओं से घबराना नहीं, मजबूत बनना सीखो, भूतकाल की निराशाओं के पन्ने को फाड़कर अज्ञान की खाई में फेंक दो, दुनिया का जीवन आशाओं-निराशाओं का पिंजरा है, और आध्यात्मिक जीवन एक आनन्दमय खेल का मैदान है। हमें चोट लगती है, जीत होती है, हार होती है, तो भी हम हँसते हैं, खिलखिलाते हैं। चिन्ता किसे नहीं, दुःख किसे नहीं। नदी बहती है, बहना उसका स्वभाव है, जीवन चलता है, चलना उसका स्वभाव है।

अब संकल्पों में कमजोरी न लाना, श्रद्धा को मजबूत बनाना, संशय की रात जा रही है, विश्वास का सूरज तेजी से चमके ताकि तुम लोगों को राह बता सको। साधक के लिए हर रोज नया साल, जीवन के नये पाठ, नये कदम और नये संकल्पों का त्योहार। आप साधक से सिद्ध बनो, यह हमारा सत्संकल्प है। नया वर्ष परिवर्तन ला रहा है। प्रेरणा की धारा को, जो बह रही है, अब पहले से अधिक चौड़ा मार्ग मिलना चाहिए। हमारे सत्संकल्पों को मूर्त्त रूप दो।

सारी जिन्दगी योग साधना है, ईश्वर का दूसरा नाम आनन्द है। हिम्मत के साथ मंजिल तक बढ़ते जाओ, उज्ज्वल भविष्य तुम्हारे पथ में फूल बिखेर रहा है।

प्रार्थना की साधना

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

कष्ट या परेशानी के समय सहायता के लिए ईश्वर पर निर्भर होना प्रार्थना है। जब बिल्ली का बच्चा रोता है, तब उसकी माँ उसको तुरन्त पकड़ कर ले जाती है। वैसे ही भक्त जब आर्त्त होकर रोता है, तब भगवान उसको बचाने तुरन्त आ जाते हैं।

आत्मा जब अशान्त हो जाती है, तब ईश्वर से शान्ति के लिए आग्रह करना प्रार्थना है। ईश्वर से आत्म-साक्षात्कार की माँग करना प्रार्थना है। प्रभु से सामर्थ्य, शान्ति और शुद्ध बुद्धि के लिए अनुरोध करना ही प्रार्थना है। भगवान के सामने अपने दिल को खोलकर उसका बोझ हल्का करना प्रार्थना है। जब आप द्वन्द्व में हों तब आपके लिए क्या सर्वोत्तम होगा, इसका निर्णय ईश्वर पर छोड़ना प्रार्थना है। प्रभु से मित्रता करना प्रार्थना है।

ईश्वर मिलन के लिए आत्मा की आतुरता ही प्रार्थना है। प्रभु से मिलने के लिए व्यक्ति के द्वारा किया गया हर प्रयास प्रार्थना है। ईश्वर से समीपता प्रार्थना है। मन को ईश्वर से जोड़ना प्रार्थना है। मन को प्रभु पर स्थिर करना प्रार्थना है। प्रभु का ध्यान प्रार्थना है। प्रभु के लिए अपने को पूर्ण रूप से समर्पित करना प्रार्थना है। एकान्त में मन और अहंकार को ईश्वर में मिला देना प्रार्थना है। भगवान की पूजा प्रार्थना है। उसकी महिमा गाना प्रार्थना है। ईश्वर को उसके आशीर्वादों के लिए धन्यवाद देना प्रार्थना है।

प्रार्थना वह गूढ़ अवस्था है जिसमें व्यक्ति की चेतना प्रभु में डूब जाती है। आत्मा को परमात्मा तक उठाना प्रार्थना है। यह उसके प्रति प्रेम और सम्मान की अभिव्यक्ति है। प्रार्थना एक प्रबल आध्यात्मिक शक्ति है। प्रार्थना योग की शुरुआत है, यह प्रारम्भिक आध्यात्मिक अभ्यास है। प्रार्थना धर्म का सार और उसकी आत्मा है। प्रार्थना के बिना कोई व्यक्ति जी नहीं सकता।

प्रार्थना के लिए अधिक बुद्धिमान् या वाक्पटु होने की आवश्यकता नहीं है। जब आप प्रार्थना करते हैं, तब ईश्वर आपका हृदय चाहता है। एक विद्वान्, किन्तु भावशून्य पण्डित के मुख से निकले धाराप्रवाह शब्दों की अपेक्षा किसी विनम्र, शुद्ध आत्मा से निकले हुए कुछ टूटे-फूटे शब्द भगवान को ज्यादा प्रभावित करेंगे।

प्रार्थना हृदय के अन्दर से निकलनी चाहिए, न कि मुख से। बिना भाव के प्रार्थना बर्तन की आवाज या मंजीरे की झनकार की तरह है। एक सच्चे, शुद्ध हृदय से निकली प्रार्थना को प्रभु तुरन्त सुनते हैं। एक छली, कपटी व्यक्ति की प्रार्थना कभी नहीं सुनी जाती है।

सच्चे हृदय से और उत्साहपूर्वक अपने दिल की गहराई से प्रार्थना कीजिये। तभी ईश्वर आपकी प्रार्थना सुनेंगे। अपने दिल की गहराई से केवल एक बार प्रार्थना

कीजिये। मन को विनम्र और ग्रहणशील बनाये रखिये। हृदय में गहरे भाव को जाग्रत कीजिये। प्रार्थना तुरन्त सुनी जाती है और उसका जवाब भी मिलता है। अपने दैनिक जीवन के संघर्ष में इसे अपनाइये एवं प्रार्थना की दिव्य शक्ति को स्वयं अनुभव कीजिये। लेकिन ईश्वर के अस्तित्व में आपको पूर्ण विश्वास होना चाहिए।

प्रात:काल जल्दी उठकर कुछ प्रार्थना कीजिये। जैसे आप चाहें, वैसे प्रार्थना कीजिये। बच्चे की तरह सरल बनिये। अपने दिल के बन्द दरवाजों को पूरी तरह खोल दीजिये। छल और कपट का त्याग कीजिये। आपको सब कुछ प्राप्त होगा। सच्चे भक्त प्रार्थना की शक्ति को अच्छी तरह से जानते हैं।

प्रतिदिन प्रात:काल उठने के पश्चात् और सोने से पहले कम-से-कम पाँच मिनट के लिए प्रार्थना कीजिये। प्रतिदिन अपनी सच्ची प्रार्थना के माध्यम से प्रभु से मिलन कीजिये। यदि प्रार्थना आपकी आदत बन जाती है, तो आपको अनुभव होगा कि आप इसके बिना नहीं रह सकते हैं।

चाहे कितने भी प्रलोभन या समस्याएँ आपको घेरें, अपनी प्रार्थना को बरकरार रखिये। प्रार्थना के द्वारा अपने चारों ओर एक अभेद कवच बना लीजिये। बिना किसी स्वार्थ के प्रार्थना कीजिये। पहले पूरे विश्व की शान्ति और समृद्धि के लिये प्रार्थना कीजिये, फिर अपने लिए प्रार्थना कीजिये। मैं स्वयं पूरे विश्व की शान्ति के लिए, सभी रोगियों के स्वास्थ्य एवं शान्ति के लिए तथा दिवंगत आत्माओं और प्रेतात्माओं की शान्ति के लिए प्रार्थना और कीर्तन करता हूँ।

किसी स्वार्थपूर्ण उद्देश्य या सांसारिक पदार्थ के लिए प्रार्थना मत कीजिये। प्रभु की कृपा के लिए प्रार्थना कीजिये। दिव्य प्रकाश, शुद्धता एवं आध्यात्मिक

मार्गदर्शन के लिए प्रार्थना कीजिये। साधना करने के लिए, मन और इन्द्रियों को नियंत्रित करने के लिए आत्मज्ञान और आध्यात्मिक शक्ति की याचना कीजिये। दैवी कृपा के लिये प्रार्थना कीजिये। ईश्वर आपके हृदय में रहता है। उसको निरन्तर याद करने से आप पवित्र हो जायेंगे और अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेंगे।

प्रभु से अपनी त्रुटियों को दूर करने के लिए शक्ति प्राप्त करने हेतु प्रार्थना कीजिये। कष्ट से मुक्ति के लिए नहीं, बल्कि उसका सामना करने के लिये सामर्थ्य और सहनशीलता के लिये प्रार्थना कीजिये। स्वयं को इच्छारहित बनाने के लिए ईश्वर से प्रार्थना कीजिये। इच्छा हो तो केवल एक – आत्म-साक्षात्कार। प्रार्थना करने में कोई आलस्य नहीं होना चाहिए।

सभी दिशाओं में प्रार्थना के तीर छोड़िये। कोई-न-कोई तो प्रभु के हृदय में जरूर लगेगा। आपका काम केवल प्रार्थना करना है, बस। वह सुनता है या नहीं, इसकी चिन्ता आपको नहीं करनी है।

प्रार्थना के लाभ

जो नियमित प्रार्थना करता है, वह शाश्वत शान्ति और आनन्द की ओर ले जाने वाली आध्यात्मिक यात्रा आरम्भ कर चुका है। प्रार्थना व्यक्ति को उन्नत बनाती, रूपान्तरित और प्रेरित करती है। प्रार्थना बचाती और पार लगाती है। प्रार्थना से शान्ति और तेजस्विता प्राप्त होती है। जो व्यक्ति प्रार्थना नहीं करता है, वह व्यर्थ ही जी रहा है।

हे अज्ञानी मनुष्य! प्रार्थना की शक्ति के बारे में बहस मत करो। तुम भ्रम में पड़ जाओगे। आध्यात्मिक मुद्दों पर बहस नहीं की जाती है। बुद्धि एक सीमित और दुर्बल साधन है, इस पर विश्वास मत करो। प्रार्थना उस स्तर तक पहुँचा देती है जहाँ तर्क पहुँचने का साहस भी नहीं करता। प्रार्थना के दिव्य प्रकाश के द्वारा अज्ञान के अन्धेरे को दूर कीजिये। प्रार्थना एक प्रबल आध्यात्मिक शक्ति है। प्रार्थना आत्मा के लिये आध्यात्मिक भोजन है। प्रार्थना आध्यात्मिक टॉनिक है। इससे अधिक पवित्र करने वाली कोई चीज नहीं है।

प्रार्थना से आध्यात्मिक स्पन्दनों का निर्माण होता है और मन को शान्ति मिलती है। यदि आप नियमित प्रार्थना करते हैं, तो आपका जीवन क्रमश: बदलेगा और उन्नत बनेगा। प्रार्थना शाश्वत आनन्द का द्वार है।

प्रार्थना हृदय को उदार बनाती और पवित्र करती है। प्रार्थना हृदय को अपरिमित शक्ति और बल प्रदान करती है। प्रार्थना से हृदय हल्का हो जाता है और मन को शान्ति, सामर्थ्य एवं पवित्रता की प्राप्ति होती है। प्रार्थना से व्यक्ति का मन, हृदय और बुद्धि शुद्ध होते हैं एवं सत्त्व से भर जाते हैं। प्रार्थना के द्वारा जब मन शुद्ध और सात्त्विक हो जाता है, तब बुद्धि तीव्र एवं कुशाग्र हो जाती है। जब आप प्रार्थना

करते हैं, तब आप स्वयं को अनन्त आध्यात्मिक ऊर्जा के साथ जोड़ लेते हैं और प्रभु से शक्ति, ऊर्जा, प्रकाश एवं सामर्थ्य प्राप्त करते हैं।

प्रार्थना मोक्ष के मार्ग का सच्चा साथी है। प्रार्थना करने वाला भक्त मृत्यु के भय से भी मुक्त हो जाता है। प्रार्थना भक्त को भगवान के निकट ले जाती और उसे दिव्य चेतना का अनुभव कराती है। प्रार्थना के द्वारा आत्मा भक्ति के पंख लगाकर प्रभु के पास पहुँच जाती है। प्रार्थना के माध्यम से भक्त अनन्त सत्ता के सतत् सम्पर्क में रहता है।

ईश्वर निराकार है, परन्तु भक्त की भावपूर्ण प्रार्थनाओं के कारण वह अपनी स्वतन्त्र इच्छा से अनेक रूप धारण करता है। प्रार्थना कीजिये, वह अपने आप को अवश्य प्रकट करेगा।

प्रार्थना से पर्वतों को हटाया जा सकता है। प्रार्थना से चमत्कार होते हैं। जब सभी डॉक्टर किसी मरीज के बचने की आशा छोड़ देते हैं, तब प्रार्थना से मदद मिलती है और मरीज चमत्कारिक रूप से ठीक हो जाता है। ऐसे अनेक उदाहरण हैं।

प्रार्थना की शक्ति का वर्णन नहीं किया जा सकता। इसकी महिमा अपार है। सच्चे भक्त ही इसकी शक्ति और महत्त्व को जान पाते हैं। इसलिए हमेशा प्रभु से प्रार्थना कीजिये।

नये युग का योग

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

आने वाले युग में योग एक शक्तिशाली संस्कृति के रूप में प्रकट होने वाला है। यह आधुनिक संस्कृति को और अधिक उपयोगी तथा सारपूर्ण बनाते हुए उसके विकास में सहायक होगा। आज भले ही हमें यह स्पष्ट दिखलाई न पड़े परन्तु 21वीं शताब्दी में हमें यह पता चलेगा कि राष्ट्रों का भविष्य एवं मानवता का दर्शन किस प्रकार योग-शास्त्र की व्यवस्था एवं मार्गदर्शन प्राप्त करेंगे।

मानवता आज चौराहे पर खड़ी है। एक लम्बी क्रांति आज अपनी चरम सीमा पर पहुँच गई है। बहुत वर्षों तक हम भोग की वस्तुओं के गुलाम रह चुके हैं। हम ऐसे जीवन में रहे हैं जहाँ पदार्थ मन पर हावी था। हम बाह्य पदार्थों के प्रति तो सजग रहे परन्तु आन्तरिक चेतना और उसकी गहराई में छिपे रहस्यों को हमने ठुकरा दिया। आज हम उस स्थिति में पहुँच चुके हैं जहाँ हमें अपने मन की गहराई में छिपे अज्ञात रहस्यों के विषय में फिर से सोचने पर विवश होना पड़ा है। हमें यह सोचना है कि पदार्थ मन पर हावी हो या मन पदार्थ पर। आज हमारे मनीषियों ने यह प्रमाणित कर दिया है कि मन विषयों का स्वामी है, न कि विषय-भोग मन के स्वामी।

हमें एक नई दिशा की खोज है। धर्म इसे पा नहीं सके हैं। विभिन्न दर्शन एवं सामाजिक सिद्धान्त असफल हो चुके हैं। लेकिन एक दिशा, एक सिद्धान्त अभी भी शेष है, जो वर्तमान चुनौती को स्वीकार तो नहीं करता, परन्तु जो दुनियाभर

के लोगों पर एक आशावादी छाप छोड़ने में अवश्य सफल हुआ है। इस उक्ति से मेरा संकेत योग की ओर है। योग ने निश्चय ही आधुनिक संस्कृति को प्रभावित किया है। योग मानवता के क्षितिज पर एक सुनहरा इन्द्रधनुष है, जिसने मानव मन में आशा की किरण जगायी है, तथा मानसिक एवं भावनात्मक स्थिरता प्राप्त करने के द्वार खोल दिये हैं। अब यह प्रमाणित हो चुका है कि योगाभ्यास करने से हम अपने अन्दर की प्रकृति को जान सकते हैं, अपने अस्तित्व की गहराई में छिपे रहस्यों को उजागर कर सकते हैं।

एक बार विश्व यात्रा के दौरान मैं दक्षिण अमेरिका के सान अगस्तिन नगर में स्थित एक खुले अजायबघर में पहुँचा। वहाँ मुझे एक ऐसी प्राचीन सभ्यता की झलक मिली जो योग विज्ञान पर आधारित थी। इसलिए हम निस्संकोच कह सकते हैं कि योग सम्पूर्ण मानवता का विज्ञान है। इसे हिन्दू संस्कृति द्वारा सुरक्षित अवश्य रखा गया, परन्तु यह केवल हिन्दुओं का विज्ञान नहीं है। आज हम शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक शान्ति एवं भावनात्मक स्थिरता की बातें करते हैं, लेकिन यह तो योग मार्ग की सिर्फ शुरुआत है, अन्त नहीं। मैं यह निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि ये योग के प्रारम्भिक सोपान मात्र हैं।

हम लोगों ने स्वास्थ्य पर पुनर्विचार करना शुरू किया है। इस शताब्दी के प्रथम चरण में लोगों ने स्वास्थ्य को बड़ी निराशा की दृष्टि से परखा। हमें इस आशावादी और निराशावादी दृष्टिकोण के सम्बन्ध में एकदम स्पष्ट होना चाहिये। जब हम दवाइयों के द्वारा शारीरिक संतुलन प्राप्त करना चाहते हैं तो वह एक निराशावादी दृष्टिकोण है। माइग्रेन को दर्दनाशक दवाओं से ठीक करना स्थायी तरीका नहीं है। जब हम प्राकृतिक नियमों को आत्मसात् करते हैं, जब हम जीवन की प्रकृति तथा शरीर एवं वातावरण को समझना प्रारम्भ करते हैं, उसी समय से हमारा शारीरिक कष्ट समाप्त हो जाता है और हमारे स्वास्थ्य में संतुलन आ जाता है। योग ने इस

युग के सामने इसी विचार को प्रस्तुत किया है। पर अभी तक यह विचार अपनी शैशवावस्था में ही है।

योग मनुष्य को उस स्थान तक पहुँचा सकता है, जहाँ वह उच्च चेतना से सम्बन्ध स्थापित कर सकता है। वर्तमान में मैं इससे ज्यादा कुछ नहीं कह सकता, परन्तु जहाँ तक मेरी दृष्टि जाती है और जहाँ तक मैं विचार कर सकता हूँ, उसके आधार पर मैं जानता हूँ कि यही सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु है। इस नये युग में उच्च चेतना से अपना सम्बन्ध जोड़ना ही योग है। बहुत समय से हमलोगों ने स्थूल शरीर एवं पदार्थमय संसार पर ही अपना ध्यान सीमित रखा। इसी अवधारणा ने अनेक शारीरिक और मानसिक विपत्तियों को जन्म दिया। भले ही लोग आज इस बात पर विश्वास न करें, परन्तु वास्तविकता यही है। जब हम लोग अपने आप को नश्वर पदार्थों से बाँधते हैं तब स्वाभाविक ही हम उनसे होने वाले दु:खों के शिकार हो जाते हैं।

हम लोग इसलिये दु:खी नहीं हैं कि हमारा स्वास्थ्य ही ऐसा है, बल्कि हमारे दु:खी होने का कारण यह है कि हमने अपना सम्पर्क ऐसी वस्तुओं से किया है जिनमें दु:ख ही दु:ख है। जब हम इनसे नाता तोड़कर, अपनी अन्तरात्मा से सम्बन्ध जोड़ते हैं तो हम सुख, शान्ति और आनन्दपूर्ण अनुभव के भागीदार बन जाते हैं। वास्तव में यह सब सम्पर्क में आने वाली वस्तु की प्रकृति पर निर्भर करता है। जब आप खारे समुद्र में तैरते हैं तो आपको नमक का स्वाद आता है, लेकिन जब आप मीठे पानी के तालाब में तैरते हैं तो मीठे पानी का स्वाद आता है। रही बात पसन्द-नापसन्द की, तो यह तो हमारी अपनी मर्जी है कि हम खारा पानी पसन्द करते हैं अथवा मीठा।

जीवन में दु:ख का कोई कारण नहीं है। जीवन सम्पूर्णता का, सत्यं-शिवं-सुन्दरं का पर्याय है। हमारा मन अभी पूर्णत: गिर चुका है। यह अस्थिर है। हमारे विचार तथा व्यवहार अत्यन्त हानिकारक और मलिन हो चुके हैं। इसलिये हम दु:ख भोगते हैं। और तो और, हमें सही ढंग से सोचना भी नहीं आता। सभी चीजें वस्तुत: अखण्ड और एकरूप हैं, लेकिन हमने सभी को विश्लेषणात्मक दृष्टि से तोड़ा है। हमने सभी चीजों को संकीर्णता और स्वार्थ की दीवारों में कैद कर दिया है। हमारी हानि, हमारी घृणा, हमारा जन्म, हमारा प्रेम – इन सब सीमाओं में हम बंधे हैं। हम जीवन की प्रत्येक चीज को गलत ढंग से देखते और सोचते हैं। यह अविद्या ही हमारे समस्त दु:खों का मूल कारण है।

मन ही व्यक्ति को स्थूल जगत् एवं सूक्ष्म जगत् से जोड़ता है। इसलिए अब मन की सीमाओं, बन्धनों और आदतों को तोड़ना होगा। मन को नये ढंग से संवारना होगा। यदि हमारा मन दु:ख भोगते रहने का आदी हो गया है तो निश्चित ही इसे आनन्द के अनुभव के लिये भी प्रशिक्षित किया जा सकता है। इस युग में बिना

ऐसी युक्ति के मनुष्य आनन्द प्राप्त नहीं कर सकता। हम सभी इस नये युग को उसके क्रियाकलापों, कल्पनाओं एवं सीमाओं से जानते हैं। हम इस स्थूल शरीर को लेकर उच्च चेतना से सम्बन्ध नहीं जोड़ सकते। जब कोई पदार्थ तोड़ा जाता है तो अन्त में उससे ऊर्जा प्राप्त होती है। उसी प्रकार मन का भी विखण्डन करना होगा। तभी हम उससे शक्ति प्राप्त कर सकते हैं। हमारा अहं अष्टधा प्रकृति के आवरणों से ढका हुआ है, उसे भेदना होगा। तभी शक्ति की उत्पत्ति और आत्म-साक्षात्कार की प्राप्ति सम्भव है।

ध्यानयोग के अभ्यास द्वारा अपनी सजगता बढ़ाकर हम इस संकीर्णता को तोड़ सकते हैं। इसलिये हम लोग अपने मन और मस्तिष्क को प्रशिक्षित करते हैं, ताकि हम अपनी अन्तरात्मा से सम्बन्ध जोड़ सकें। आत्मा ही अन्य तत्त्वों को मार्गदर्शन देती है। आत्मा के प्रति सजग होने से ही भावनाओं को व्यवस्थित एवं संतुलित किया जा सकताा है। आज आप मन को 'साइको-एनालिसिस', 'ब्रेन-वॉशिंग' या 'समाज परिवर्तन' द्वारा नहीं बदल सकते। अगर आपका अपने मन पर अधिकार नहीं, तो आप अपने जीवन को नहीं बदल सकते। मन जीवन के अनुभवों को नियंत्रित करता है। मन को परिवर्तित करने के लिये योग के आसन, प्राणायाम, मुद्रा, बंध, धारणा, ध्यान और समाधि जैसे उपायों को अपनाना होगा। आसन और प्राणायम को मात्र शारीरिक व्यायाम मत समझना। वास्तव में योग स्थूल नहीं सूक्ष्म है। सूक्ष्म भी नहीं, सबसे परे एक अलग ही चीज है।

हमें अपने अविद्या रूपी घूँघट के पट को खोलना होगा, उन मानसिक और भावनात्मक बंधनों को तोड़ना पड़ेगा, जिन्होंने हमें बौद्धिक पचड़ों में बाँध रखा है। जब तक हम अपने मन को व्यवस्थित नहीं करते, तब तक यह प्रेम, यह भक्ति-भाव, चंचल मन का एक खेल ही रहेगा। यही कारण है कि लाखों-लाख धार्मिक और भक्त लोग आध्यात्मिक रूप से आगे नहीं बढ़ते। यह भी सम्भव नहीं कि आप आँखें बन्द करें और भगवान के दर्शन हो जायें। मनुष्य की चेतना का एक ऐसा क्षेत्र है जो अत्यन्त शान्त है, जहाँ मनुष्य के दु:ख और पीड़ाएँ प्रवेश नहीं कर सकते। यह स्थान हमारे सारे सामान्य अनुभवों से परे है। यही वह जगह है जहाँ पहुँचने के लिये हम सभी जी-तोड़ कोशिश में लगे हुए हैं। मन के तूफानों, भावनाओं की आँधियों और बुद्धि की चालाकियों का अतिक्रमण करने के लिये अवश्य ही कुछ ठोस अभ्यास करने होंगे। तभी हम ईश्वरत्व की अवस्था को प्राप्त कर सकते हैं।

जो जीवन आप जी रहे हैं, वह आपके जीवन का केन्द्र नहीं। वह तो केवल बाह्य परिधि है। जीवन-केन्द्र तक पहुँचने के लिये और आन्तरिक शान्ति प्राप्त करने के लिये योग को अपनाना होगा। तभी आप उस स्थान पर पहुँच सकेंगे जहाँ और कुछ नहीं, केवल उच्च चेतना अैर सच्ची सजगता का साम्राज्य दूर-दूर तक फैला हुआ है। यही इस नये युग का योग है।

योग मनोविज्ञान

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

योग मनोविज्ञान का सम्बन्ध मनुष्य के जीवन से है। योग मनोविज्ञान आधुनिक मनोविज्ञान से बहुत अधिक प्राचीन है। यह बात जरूर है कि आज विश्व में पाश्चात्य मनोविज्ञान को बहुत मान्यता मिली है, क्योंकि पिछले दो सौ वर्षों से इस मनोविज्ञान के क्षेत्र में पाश्चात्य देशों में बहुत-से अनुसंधान और प्रयोग किए गए हैं, किन्तु यह सोचना भी बड़ी भूल होगी कि इस आधुनिक पाश्चात्य मनोविज्ञान के पूर्व विश्व में मनोविज्ञान की दूसरी कोई विद्या नहीं थी।

मनुष्य के जीवन में अनेक विकृतियाँ, विकार, दोष या मनोवस्थायें हैं, जिनसे पीड़ित होकर वह कभी अवसाद की अवस्था में जाता है तो कभी हर्ष की अवस्था

में। ये सब अनुभव मनुष्य को आदि काल से होते आये हैं। इस प्रकार मनोविज्ञान मनुष्य के जीवन का एक अभिन्न अंग है, और देखा जाए तो योग वास्तव में मनोविज्ञान ही है। अपनी इस सभ्यता की सबसे प्राचीन मनोवैज्ञानिक विधि योग ही है। बीच में एक समय अवश्य आया था जब कुछ भ्रान्तियों के कारण हमने योग को मनुष्य के व्यक्तित्व से नहीं, मनुष्य की मानसिकता से नहीं, बल्कि केवल अध्यात्म से जोड़ दिया था।

अनुशासन और संयम

योग क्या है, यह जानने के लिए महर्षि पतंजलि द्वारा रचित योगसूत्रों के प्रथम तीन सूत्रों को पढ़ लेना चाहिए। प्रथम तीन सूत्रों में ही सम्पूर्ण योग और योग की मनोवैज्ञानिक परिभाषा को महर्षि पतंजलि ने लिख दिया है। पहला सूत्र है – *अथ योगानुशासनम्*। बहुत-से लोग इसका अर्थ निकालते हैं कि अब योग की व्याख्या होगी। बहुत-से लोग ऐसा भी अर्थ निकालते हैं कि योग को एक संयम के रूप में अपने जीवन में अपनाया जाए या योग के द्वारा मनुष्य जीवन में संयम को प्राप्त करता है। संयम प्राप्त करने के बाद क्या होता है? *योगश्चित्तवृत्ति निरोधः* – योग के द्वारा जिस संयम को तुम प्राप्त कर चुके हो, उससे तुम्हारी चित्तवृत्ति का निरोध होता है। जब चित्तवृत्ति का निरोध हो जाता है, उसके बाद क्या होता है? तब मनुष्य को अपने स्वरूप का आभास होता है – *तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्*।

जो भी व्यक्ति इस संसार से नाता जोड़ता है, उसका अपना एक आचरण होता है और वह आचरण होता है भोग का। ईशावास्य उपनिषद् में कहा गया है –

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजिथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥

संसार को तो ईश्वर ने ही बनाया। संसार को बनाते समय उसने दिन और रात, ठण्ढी और गरमी, सुख और दु:ख को भी बनाया, जो एक-दूसरे को सन्तुलित करते हैं। अगर केवल दु:ख ही दु:ख हो, सुख न आये, तो उस समय आदमी असन्तुलित हो जायेगा। सुख आता है दु:ख को सन्तुलित करने के लिए। भगवान ने यह सब बनाने के बाद कहा कि अब यह जीवन तुम्हारा, यह संसार तुम्हारा, जैसे जीना है जीओ। इस जीवन का, इस संसार का सदुपयोग करो या दुरुपयोग या मात्र उपयोग करो, वह निर्णय तुम्हारा अपना है।

समस्या तब आती है जब मनुष्य इस संसार का और अपने जीवन की प्रतिभाओं का दुरुपयोग करता है। सम्भवत: जीवन के सदुपयोग की शिक्षा योग मनोविज्ञान ही देता है। जहाँ तक सामाजिक शिक्षा का सवाल है, हम तो कहेंगे कि वह जीवन के दुरुपयोग की शिक्षा देती है, जिसको आप लोग कहते हैं 'रैट रेस', दुनिया का

चक्कर। इस भाग-दौड़ और प्रतिस्पर्धा की दुनिया में कौन कितना यशस्वी होता है, कितना नाम कमाता है, कितना समृद्ध होता है, यह निर्भर रहता है उसके हुनर, उसकी कूटनीति और उसकी अपनी चालों पर। होता है कि नहीं? कूटनीति और चाल, ये दो चीजें निर्धारित करती हैं कि आदमी कहाँ जाएगा, कैसे जाएगा और कहाँ तक पहुँचेगा।

तमस् से सत्त्व की ओर

भगवान ने सृष्टि रची, आदमी बनाया, पशु-पक्षी बनाये और सृष्टि के सभी जीवों में शुभ-अशुभ, सुख-दु:ख, गर्मी-ठण्ढी, दिन-रात जैसी द्वैत अवस्थाओं को भर दिया। द्वैत का मतलब होता है वे दो चीजें जो एक-दूसरे को सन्तुलित करती हैं। सुख आने पर दु:ख सन्तुलित होता है। ठण्ढी आने पर गर्मी सन्तुलित होती है। लेकिन साथ ही भगवान ने कहा कि जब तुम संसार में जाते हो, हम तुमको एक विशेष गुण से युक्त कर रहे हैं और दो गुणों को प्राप्त करने की संभावना भी तुमको दे रहे हैं। जिस विशेष गुण से हम तुमको युक्त कर रहे हैं, उसको कहते हैं तमस्। तमस् का अर्थ होता है स्थिति-शीलत्व, स्थिति का स्वभाव। मैं हूँ, यह पदार्थ है, यह भवन है, यह व्यक्ति है, यह पुरुष है, यह महिला है, यह बच्चा है – यह एक विशेष अवस्था, एक विशेष परिस्थिति का ज्ञान होता है, जिसमें मनुष्य अपने को एक अलग ईकाई के रूप में पहचानने लगता है। मैं दूसरों से अलग हूँ, मेरा मन दूसरों से अलग है, मेरा सोचने का तरीका दूसरों से अलग है, इसको कहते हैं स्थिति का ज्ञान, तमस्।

तमस् का अर्थ यहाँ पर अविद्या, अन्धकार और अज्ञान नहीं है। तमस् का अर्थ होता है एक स्थिति को प्राप्त कर लेना और उससे तादात्म्य भाव का अनुभव करना। आपका बेटा या बेटी होती है, उसको आप अपना मानते हो, वह है तमस्। यह शरीर मेरा है, यह तमस् है। अपने से तादात्म्य भाव, अपने से घनिष्ठ सम्बन्ध, इसको कहते हैं तमस्। विषय-भोगों से घनिष्ठता को कहते हैं तमस्। तो भगवान ने कहा कि तुमको यह गुण दे रहा हूँ, जिससे तुम अपने आपको और दूसरों को पहचान सको, इससे तुमको हर व्यक्ति में भिन्नता दिखाई देगी, लेकिन तुममें हम यह सम्भावना भी दे रहे हैं कि तुम अपनी इस मानसिकता को बदल सको, इसमें एक सकारात्मक परिवर्तन ला सको, जिससे तुम सत्त्व अवस्था को प्राप्त कर सकते हो। सत्त्व अवस्था में अंतर इतना ही होगा कि तमस् में तुमने अपने से और अपनों से ही सम्बन्ध स्थापित किया था, सत्त्व में सभी से तुम्हारा सम्बन्ध स्थापित होता है। जो 'स्व' से जुड़ा हुआ एक स्वभाव है, वह परम से जुड़कर परमार्थ का स्वभाव हो जाता है।

योग मनोविज्ञान में इन्हीं दो प्रयासों को देखना है कि तमस् में हम किस प्रकार अपने आपको, अपनी परिस्थितियों को समझ पाते हैं, झेल पाते हैं और किस प्रकार

हम अपने जीवन की दिशा को सत्त्व की ओर बदल सकते हैं, उसे एक सकारात्मक मोड़ दे सकते हैं। योग मनोविज्ञान एक आचार है, शिक्षा नहीं।

हमारे जीवन में मनुष्यत्व की पहचान हमारे संस्कार कराते हैं, इस बात को भूलना नहीं। अच्छे संस्कारों से युक्त होना, एक सकारात्मक मनोस्थिति से युक्त होना कहलाता है। एक दूषित विचार से युक्त होना नकारात्मक मनोभाव से युक्त होना कहलाता है। लेकिन प्रश्न यह उठता है कि तामसिकता से सात्त्विकता की ओर, स्वयं से तादात्म्य भाव से पूरे संसार से तादात्म्य भाव की ओर कैसे जायें? यहीं पर साधना काम आती है। अब बड़े लोगों को तो साधना करने में बहुत परेशानी होती है, क्योंकि संस्कार तो कभी रहा नहीं। और जो संस्कार थे भी, 'वह तो दादा-दादी किया करते थे, हम तो आधुनिक हैं', इस विचारधारा से लुप्त हो चुके हैं। इसलिए बड़े लोगों को योग मनोविज्ञान की व्यावहारिकता को समझने में बहुत दिक्कत होती है कि अगर हम किसी चीज को अपने जीवन में बदलें तो कैसे बदलें; आत्म-अनुशासन लायें तो कैसे लायें। बच्चों को यह कठिनाई नहीं होती।

मन की विभिन्न अवस्थाएँ

हर व्यक्ति के भीतर अनुशासन और संयम की वह क्षमता है, जिसके द्वारा वह अपने जीवन की डगमगाती नैया को स्थिर बना सकता है। योग दर्शन में मन को चार तरीके से समझाया गया है – क्षिप्त, विक्षिप्त, मूढ़ और एकाग्र। सामान्य रूप से हम लोग पहले तीन में ही भ्रमण करते हैं, एकाग्रता हम लोगों के शब्दकोश में है भी

नहीं। क्षिप्त का मतलब होता है – अनजान, सोया हुआ, पड़ा हुआ। विक्षिप्त का मतलब है – चंचल, कभी स्थिर नहीं हो पाता, कभी यहाँ भागता है, कभी वहाँ। मूढ़ का मतलब अपनी ही चिन्ता, सही-गलत, पुण्य-पाप का निर्णय नहीं, अपने में ही मगन। और एकाग्र का मतलब मन की सभी विक्षिप्त अवस्थाएँ शान्त हो चुकी हैं, विकार दूर हो चुके हैं और मन एक बिन्दु पर आकर टिक गया है।

हमारे गुरु, स्वामी सत्यानन्दजी कहते हैं कि जीवन में सबसे कठिन चीज एकाग्रता को प्राप्त करना है, क्योंकि मन तो कभी स्थिर होता नहीं, मन किसी वस्तु में टिकता नहीं। चाहे पूजा भी करें, मंत्र भी जपें, अनुष्ठान भी करें, व्रत भी करें, हवन भी करें, कुछ भी करें। पहले उत्साह में तो सब अच्छा लगता है, लेकिन बाद में सोचते हैं कि कब खत्म होने वाला है। पूजा में बैठे हैं, सोचते हैं, पण्डितजी थोड़ा जल्दी करा दीजिए न, बेटे को ऑफिस जाना है। पूजा हो रही है, बेटे को ऑफिस जाना है, प्राथमिकता किसको है? ऑफिस जाना है तो जाए, लेकिन पूजा की विधि को भंग क्यों करना अपनी सहूलियत के लिए? हम लोग हमेशा अपनी सहूलियत के अनुसार चलने वाले लोग हैं। इसके लिए चाहे परम्पराएँ टूट जाएँ, कोई बड़ी बात नहीं। नियम भंग हो जाए, कोई बड़ी बात नहीं, क्योंकि हम लोगों का मन इतना चंचल और विक्षिप्त रहता है या कभी मूढ़ अवस्था में अपने आप में इतना रमा रहता है कि मनुष्य के भीतर विवेक का अभाव हो जाता है।

एक उदाहरण देते हैं, बहुत-से लोग मंत्र जप करते हैं। मंत्र दीक्षा के समय बताते हैं कि कितनी माला जप करना है और अगर हम उनको कह दें एक माला, तो हमको ऐसे घूरकर देखते हैं कि जैसे हमने कोई पाप किया है। 'बस एक माला? ज्यादा नहीं कर सकते हैं?' 'कितना करना चाहते हो?' 'कम-से-कम सात-आठ माला हो तो लगे हमने कुछ किया।' ठीक है, अब करो दस माला। चेला ही बने अपना गुरु फिर। गुरुजी बतलाते हैं कि एक माला भी करना मुश्किल है। एक माला घुमायी, उसके बाद मन कहीं चला गया घूमने। इधर माला घूम रही है, मंत्र चल रहा है और मन कहीं और है। ऐसे तो सौ माला भी करोगे तो कुछ फायदा नहीं है। अपना ही समय बर्बाद हो रहा है। अगर सौ माला जपने के बदले यह प्रयास करते हो कि हम बिना मानसिक हलचल या विक्षिप्तता के, स्थिर होकर एक माला भी कर लें, तो वही हमारी एकाग्रता का लक्षण है।

एकाग्र होना इस संसार में सबसे कठिन चीज है, और अगर कोई इतना कर ले, तो समझ लेना कि जीवन की कुंजी उसके हाथ में आ गई है। अगर मन स्थिर है तो निशाना साधने के लिए केवल एक गोली पर्याप्त है, सौ गोली चलाने की आवश्यकता नहीं। इसी प्रकार अगर मन स्थिर है तो एक माला मंत्र जपना पर्याप्त है। किन्तु मन की इस एकाग्र अवस्था तक पहुँच पाना बहुत कठिन है। सामान्य रूप से हम लोग क्षिप्त, विक्षिप्त और मूढ़ावस्था में रहते हैं, लेकिन योग में, विशेषकर

प्रत्याहार में मानसिक एकाग्रता की शिक्षा दी जाती है कि किस प्रकार हम धीरे-धीरे अपनी विक्षिप्त अवस्थाओं को समेटकर स्थिर और शान्त बनाएँ। इस बात को याद रखिए कि जिन्दगी में जो मानसिक परेशानियाँ होती हैं, वे केवल इन तीन अवस्थाओं के कारण होती हैं, चौथी के कारण नहीं। जो दु:ख होता है, इच्छाएँ होती हैं, लड़ाई-झगड़ा होता है, घृणा, ईर्ष्या, द्वेष, प्रेम, करुणा, आकर्षण और विकर्षण का अनुभव आदमी करता है, वह क्षिप्त, विक्षिप्त और मूढ़ अवस्था के कारण करता है। जब मन स्थिर और एकाग्र हो जाता है, उस समय उसके सभी विक्षेप समाप्त हो चुके होते हैं और संयम की प्राप्ति अपने आप होने लगती है।

बच्चों में संस्कार-जागृति

एक होता है बाहर का प्रयास, दूसरा होता है अन्दर से, स्वत:स्फूर्त्त प्रयास। जब बाहर का प्रयास होने लगता है, साधना के माध्यम से, आसन-प्राणायाम, आत्म-निरीक्षण के माध्यम से, स्वयं के व्यवहारों के प्रति सजग बन कर, उसे परिष्कृत करने के विचार से, तब वह जागृति अन्तर्मन में भी एक परिवर्तन लाती है। यह प्रयास बच्चों के लिए सरलता से संभव है, बड़ों के लिए नहीं, क्योंकि बड़े लोगों की मूर्ति पहले से बन चुकी रहती है, उनका व्यक्तित्व, उनकी मानसिकता बन चुकी होती है, उनके विचार निश्चित हो चुके रहते हैं, अच्छा क्या है, बुरा क्या है, यह विचारधारा बनी रहती है, पाप और पुण्य की विचारधारा भी निश्चित रहती है, और फिर इनके द्वारा प्रभावित जो आचरण होते हैं, उनको बदलना भी संभव नहीं होता, लेकिन बच्चे बाल्यावस्था में अपने को संस्कारों से युक्त कर सकते हैं। अगर वे अपने को अच्छे संस्कारों से युक्त करते हैं, तो भविष्य का समाज भी अच्छा बन सकता है।

जब हम शुरू में आए थे तब गुरुजी ने हम पर कुछ प्रयोग किए थे, जो सफल रहे। तो हमने भी सोचा, क्यों न बच्चों पर योग के विभिन्न परिणामों को देखा जाय। इस विचार से बाल योग मित्र मण्डल की स्थापना होती है। बाल योग मित्र मण्डल के जो बच्चे दस-बारह साल पहले योग से जुड़े, वे आज जीवन के ऐसे मोड़ पर हैं, जहाँ उनके भीतर योग की मानसिकता को हम स्पष्ट रूप से देख सकते हैं। उनके भीतर एक आत्मविश्वास स्पष्ट रूप से देख सकते हैं। उनकी कार्यक्षमता और कार्यप्रणाली को देख सकते हैं। और सम्भवत: अगले बीस साल में कोई दूसरी प्रतिभा निखरती दिखाई देगी, क्योंकि एक बार जब हम मन के दरवाजों को खोल कर, अपने आपको शान्त करके विभिन्न सम्भावनाओं को प्राप्त करने का प्रयास करते हैं, तब व्यक्तित्व में, चरित्र, मानसिकता, विचारधारा और व्यवहार में एक सकारात्मक परिवर्तन आता है और जीवन के साथ समझौता होता है।

जब सकारात्मक परिवर्तन आता है और जीवन के साथ समझौता होता है तब मनुष्य योगी कहलाता है। जब तक जीवन के साथ समझौता नहीं होता और मनुष्य विषयों के पीछे आकृष्ट होकर भागता रहता है, तब तक वह भोगी कहलाता है। जब मनुष्य अपने भोग में संयम नहीं ला पाता, तब वह रोगी कहलाता है। अत: भोग में संयम योग और भोग में असंयम रोग है। सभी की इच्छा है अच्छा जीवन जीना, व्यवस्थित जीवन जीना, जिसमें हम अपने भीतर शान्ति, सन्तुलन और सकारात्मकता का अनुभव कर सकें, और ऐसा जीवन जीकर सुख, शान्ति और समृद्धि को प्राप्त कर सकें। जब जीवन में यही हमारी आवश्यकता है, जो व्यावहारिक है, तो क्यों न हम अपने आपको रोग से योग की ओर ले चलें? संसार तो हमको ले ही जा रहा है रोग की ओर। कहता है भोग करो, रोगी बनो और डॉक्टर को पैसा दो। खूब भोग करो, जितना करना है करो, खाने की परवाह नहीं, सोने की परवाह नहीं, लगे रहो भाग-दौड़ में, ठन्-ठन् गोपाल के पीछे, निन्यानवे से सौ के चक्कर में। रात को ग्यारह बजे खाओ, बारह बजे सोओ, कोई परवाह नहीं। आखिर यह जीवन का दुरुपयोग नहीं तो क्या है?

एक बात पर ध्यान दो, जब पेड़ छोटा होता है, तब हर सप्ताह उसकी साफ-सफाई, सेवा करनी पड़ती है। उसको खाद देनी पड़ती है, लेकिन जब पेड़ बड़ा हो जाए, तो क्या रोज उसको खाद-पानी देना होता है? नहीं। एक समय आता है जब सेवा समाप्त हो जाती है। बड़ों के जीवन में भी एक समय आता है जब उनके द्वारा बच्चों की सेवा समाप्त होती है और बच्चा स्वतंत्र हो जाता है। समय आता है कि बच्चा माँ के आँचल के पीछे छुपकर नहीं बैठे, बल्कि सामने आए। दस-पन्द्रह साल तक आप अपने बच्चे का ख्याल कीजिए, जैसे आप पौधे का करते हैं। फिर आप रोज थोड़े ही खाद-पानी दीजिएगा? फिर प्रकृति ही देती है उसको जो देना है। बरसात होती है, पानी मिलता है। यह जो छोड़ने की एक कला है, वह हमें योग में सीखनी है।

मनुष्य का मूल स्वभाव है संग्रहकारी। वह संग्रह करना जानता है। केवल धन-सम्पत्ति का नहीं, बल्कि विचारों का, संस्कारों का, अच्छी-बुरी सभी चीजों का संग्रह करता है। और एक बार जो संग्रह हो जाता है, उसको छोड़ना कितना मुश्किल होता है। एक बार जिसको खैनी की आदत हो जाती है, एक सप्ताह छोड़े, मालूम पड़ेगा कितनी कठिनाई होती है। जिन्दगी भर की बात नहीं, एक सप्ताह की बात बोल रहा हूँ। सिगरेट पीता है, छोड़े एक सप्ताह, कितनी कठिनाई होती है! अपने साथ कितनी मुक्केबाजी करनी पड़ती है। जिस चीज को एक बार हमने स्वीकार कर लिया है, चाहे वह बुरी आदत ही क्यों न हो, उसको छोड़ना आदमी के लिए इतना मुश्किल हो जाता है, वह अपने ही विचारों, मान्यताओं और विश्वासों में लिप्त रहता है। इनसे बाहर आने के लिए उसे एक स्वस्थ मन चाहिए।

अगर अपने जीवन में, अपने समाज में एक स्वस्थ मन की कल्पना है, तो फिर मनुष्य को कुछ करना चाहिए। उसके भीतर जो सकारात्मक शक्ति है, उसके साथ वह जुड़े। उस सकारात्मक शक्ति और प्रतिभा के साथ जुड़ने की शुरुआत संयम से होती है, आत्म-सजगता से होती है, अपने द्वारा किए गये कर्मों के प्रति जागरूकता से होती है। उस संयम को प्राप्त करके वह जीवन की विभिन्न प्रतिभाओं को विकसित होने का एक अवसर दे। विज्ञान कहता है मनुष्य के मस्तिष्क का केवल दसवाँ हिस्सा जाग्रत है और शेष नब्बे प्रतिशत सोया पड़ा है। लेकिन एक प्रयास तो हम लोग कर सकते हैं कि जो नौ दरवाजे अभी बन्द हैं, उनके ताले खुल जाएँ। इसी ताले को खोलने का प्रयास योग करता है। जब ताला खुलता है, तब अपने वास्तविक स्वरूप का आभास हर मनुष्य को होने लगता है, जिसको योग में कहते हैं – *तदा द्रष्टु: स्वरूपेऽवस्थानम्*।

संयम के द्वारा चंचल वृत्ति का निरोध करके एकाग्रता के द्वारा आत्मज्ञान – यही भारत की प्राचीन योग मनोविज्ञान की विधि रही है, जो हमारी जीवन शैली में इतनी घुलमिल गई है कि उसने एक आदर्श जीवन पद्धति का, एक मानसिकता का रूप ले लिया है। जैसे-जैसे हम योग करते हैं, अपने आप को समझने लगते हैं, वैसे-वैसे प्रेरणा मिलती है कि इन पद्धतियों को पुन: अपनाया जाए, जिनके द्वारा मन पूर्ण रूप से स्वस्थ रह सकता है, जागृत हो सकता है और सक्षम बन सकता है।

जब व्यक्ति अपने बारे में सजग होकर, अपने जीवन में एक सकारात्मक परिवर्तन को लाने का प्रयास करे और अपनी प्रतिभा का सदुपयोग करे, उससे बढ़कर जीवन में दूसरी उपलब्धि क्या हो सकती है? वही एक योगमय जीवन भी है। सबको हमारी शुभकामना कि आप लोग मनुष्य के भीतर छुपे हुए संस्कारों की खोज करने और नए संस्कारों से मनुष्य को युक्त करने के लिए योग को अपनाइये। इसके द्वारा अपने समाज के भविष्य को संभालिए और अपनी व्यक्तिगत समस्याओं, चिन्ताओं, परेशानियों और विकृतियों को योग के द्वारा दूर कीजिए।

योग में शुद्धि की प्रक्रिया

स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती

योग का तात्पर्य संयोजन या मिलन से है – वह संयोजन चाहे निम्न और उच्च मन का हो या जीवात्मा और परमात्मा का। इस उच्च लक्ष्य को आप योग के अभ्यासों द्वारा सिद्ध कर सकते हैं। जब आप एस्प्रीन की गोली खाते हैं तो उसका पार्श्व-प्रभाव पैप्टिक अल्सर के रूप में होता है। लेकिन योग के पार्श्व-प्रभाव हमेशा सकारात्मक होते हैं। योग से हमें मानसिक स्पष्टता, उदात्त व्यक्तित्व और नैतिक चरित्र प्राप्त होता है। लेकिन यह सब योग का प्रयोजन नहीं। योग का प्रयोजन मिलन है और इसे सिद्ध करने के लिए शुद्धि पर बल दिया जाता है। यौगिक विचारधारा के अनुसार पहले शरीर के स्तर पर शुद्धिकरण होता है और फिर प्राणों के स्तर पर, जिससे शरीर के प्रत्येक अंग में प्राणों का प्रवाह निर्बाध रूप से होता है। फिर मानसिक स्तर पर शुद्धि होती है जहाँ मानसिक शक्तिओं को संतुलित तथा संगठित किया जाता है।

तीन शरीर

योग तीन शरीरों के बारे में चर्चा करता है – स्थूल, सूक्ष्म तथा कारण। शुद्धिकरण की प्रक्रिया इन तीनों शरीरों में होती है। हर व्यक्ति अपने भौतिक शरीर को शुद्ध करने का तरीका जानता है, और आप में से कुछ लोग अपने मन को अन्तर्मौन, अजपा-जप अथवा ध्यान के अभ्यासों द्वारा शुद्ध करना जानते होंगे। शरीर तथा मन क्रमश: स्थूल तथा सूक्ष्म आयामों से सम्बन्धित हैं। लेकिन आपको कारण

शरीर में पहुँचना तथा उसे शुद्ध करना नहीं आता है। जबकि देखा जाए तो वह सबसे महत्त्वपूर्ण शुद्धिकरण है, क्योंकि आपके सभी कर्म, संस्कार, वासनाएँ और इच्छाएँ वहीं पर संचित रहते हैं। जन्म-जन्मान्तरों से हम विभिन्न योनियों में जन्म लेते आए हैं और उन सब के संस्कार कारण शरीर में ही संचित हैं।

समय-समय पर ये संस्कार विचारों तथा स्वप्नों के रूप में सतह पर उभरते हैं। वे आपको दु:खी और परेशान कर देते हैं क्योंकि आपको उन्हें सम्भालना नहीं आता। आपको इन संस्कारों का परिष्कार करना होगा। शुद्धिकरण के बिना आप प्रगति नहीं कर सकते। जीवन में बाधाएँ और अवरोध सदा बने रहते हैं, वे आपके सामने संघर्ष, वेदना, व्यथा, विषाद, लोभ तथा घृणा के रूप में आ खड़े होते हैं। योग के अनुसार केवल ध्वनि-तरंगें ही कारण शरीर तक पहुँचकर आपके व्यक्तित्व के इस आयाम को प्रभावित कर सकती हैं।

ध्वनि और सृष्टि

सांख्य तथा योग दर्शन के अनुसार सम्पूर्ण सृष्टि – ब्रह्माण्ड, आकाशगंगा, सौरमण्डल, ग्रह-नक्षत्र, पर्वत, नदियाँ, पेड़-पौधे, आप और मैं, हम सभी ध्वनि से उत्पन्न हुये हैं। यदि यह मान्यता सत्य है तो निश्चित रूप से ध्वनि हमें सकारात्मक रूप से प्रभावित करेगी, क्योंकि यही हमारी उत्पत्ति का मूल स्रोत है। सांख्य दर्शन से सहमत होकर आज विज्ञान भी यह मानने लगा है कि सम्पूर्ण सृष्टि ध्वनि और प्रकाश का ही खेल है।

सांख्य दर्शन में तीन प्रधान तत्त्व हैं – बिन्दु, नाद और कला। बिन्दु में स्पदंन होता है और उस स्पंदन से नाद का आविर्भाव होता है। इस अनुभवातीत ध्वनि को ॐ का नाम दिया गया है। जिन लोगों ने बाइबिल का अध्ययन किया है उन्हें मालूम होगा कि उसकी पहली पंक्ति इस प्रकार है – 'प्रारम्भ में केवल शब्द था और वह शब्द ईश्वर के पास था।' योग, तंत्र तथा सांख्य दर्शन में उस शब्द को ॐ कहा गया है। सभी वस्तुओं का सृजन उस एक ध्वनि से हुआ है। आज आप जितनी ध्वनियों को सुनते हैं, चाहे वह घड़ी की टिक-टिक हो, संगीत के स्वर हों या आपकी बोलचाल की भाषा, ये सब ॐ से उत्पन्न हुई हैं।

किसी भी ध्वनि-तरंग के दो पहलू होते हैं, एक उसकी प्रबलता, और दूसरी उसकी आवृत्ति। मंत्र उच्च आवृत्ति वाली ध्वनि-तरंगें होते हैं जो सर्वत्र विद्यमान रहते हैं। उन्हें ग्रहण करने के लिए हमें अपने आंतरिक उपकरण को परिष्कृत तथा समस्वरित करना पड़ता है, जैसे प्राचीन काल में ऋषि-मुनियों ने किया था। उन्होंने अपनी श्रवणेन्द्रियों को इतना परिष्कृत किया कि वे उन सूक्ष्म मंत्रों को ग्रहण करने में सक्षम हो सके। वे मंत्रों के द्रष्टा बने और भावी पीढ़ियों के कल्याण के लिए उन्हें मानव समाज को सौंप गये।

मंत्र का प्रभाव

ध्वनि का प्रभाव बहुत ही गहन और व्यापक होता है जिसे हम अपने दैनिक जीवन में भी देख सकते हैं। जब हम विश्राम करना चाहते हैं तब मधुर संगीत चालू कर देते हैं। तत्काल ही हम उससे प्रभावित हो जाते हैं। यदि मैं अभी चॉकलेट शब्द का उच्चारण करूँ तो तुरन्त ही उन सभी लोगों के मुँह में पानी आ जाएगा जिन्हें चॉकलेट पसंद है। यदि मैं कहूँ कि आप एक अच्छे व्यक्ति हैं तो आपको उसी समय अच्छी अनुभूति होगी। लेकिन यदि मैं कहूँ कि आप बुरे व्यक्ति हैं तो तत्काल आपकी मनोदशा बदल जायेगी। यह ध्वनि का स्थूल स्तर पर प्रभाव है। हम जानते हैं कि ध्वनि से हिमस्खलन तक हो सकता है और यह काँच को चकनाचूर भी कर सकती है। ध्वनि पेड़-पौधों और पशु-पक्षियों को भी प्रभावित कर सकती है। यदि हम अपने पौधों को संगीत सुनायें तो उनका विकास बेहतर होगा। यदि हम अपनी गायों को संगीत सुनाते हैं तो वे अधिक दूध देती हैं।

मंत्र एक अति उच्च आवृत्ति की ध्वनि है। जब यह हमारी चेतना में प्रवेश करती है तो चेतना की गहराई तक पहुँचकर हमारे कारण शरीर पर अपना प्रभाव डालने लगती है। मंत्र साबुन की तरह काम करता है जो मन के भीतर की मैल को सतह तक ले आता है। सतह पर आ जाने के बाद संस्कारों का निष्कासन होता है। योग-विज्ञान में आसन तथा प्राणायाम के साथ-साथ मंत्र को भी एक महत्त्वपूर्ण योगांग माना गया है। इसलिए अपने योगाभ्यास तथा दैनिक जीवन शैली में मंत्र को अवश्य समाविष्ट करना चाहिए।

हमारे मस्तिष्क का तीन चौथाई भाग अभी निष्क्रिय है। अपनी पूर्ण क्षमता को विकसित करने के लिए मंत्र अनिवार्य है। कुछ मंत्र जैसे महामृत्युंजय तथा गायत्री मंत्र सार्वभौमिक मंत्र हैं। ॐ मूल मंत्र है। ऐसे मंत्रों का प्रयोग हर व्यक्ति कर सकता है। लेकिन हमारे आध्यात्मिक विकास को तीव्र गति प्रदान करने वाला जो मंत्र है

वह है गुरु मंत्र। गुरु मंत्र से हमें सब कुछ प्राप्त हो सकता है। यह हमारी सबसे कीमती निधि है जो हमें जीवन के हर मोड़ पर सहायता करेगी। मंत्र एक ऐसा कवच है जो नकारात्मक प्रभावों से हमारी सदा रक्षा करता रहता है।

दीक्षा

मंत्र दीक्षा में गुरु से शिष्य की ओर ऊर्जा एवं प्रेरणा सम्प्रेषित होती है। दीक्षा की व्युत्पत्ति दिक् शब्द से हुई है जिसका अर्थ है दिशा। योग के अभ्यासों द्वारा जिस शक्ति को जागृत किया जाता है उसे सही दिशा मिलनी चाहिए, नहीं तो वह छितरा जाती है। इस शक्ति को उच्च केन्द्रों की ओर दिशान्तरित करना पड़ता है और यह काम मंत्र करता है।

जिस ध्वनि से हमारा विकास हुआ है वह शक्ति का विशुद्ध स्वरूप है। अभी यह शक्ति हमारे पदार्थमय, भौतिक शरीर में सीमित है, और हमें इसे पदार्थ के बंधन से विमुक्त करना है। यदि हम उच्च अनुभवों को प्राप्त करना चाहते हैं, यदि हम अपनी आत्मा के निकट आना चाहते हैं, यदि हम जीवात्मा और परमात्मा का संयोग प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें पहले शक्ति को स्वतंत्र करना होगा, और इसके लिए मंत्र अत्यंत प्रभावी उपाय है।

गुरु की सीख

एक दिन दक्षिणेश्वर मंदिर के आस-पास के खेतों में श्री रामकृष्ण परमहंस अपने शिष्यों के साथ घूम रहे थे। आत्मचर्चा चल रही थी। एक शिष्य ने प्रश्न रखा – महाराज, मैंने कई वर्ष जप, साधना, भगवद्-आराधना की है। भावों सहित उनका आह्वान किया है। सहज जीवन बिताते हुए अपने सभी परिचितों की सेवा भी की। पर तब भी परमात्मा आज भी मुझसे उतना ही दूर है जितना कि पहले था। कभी-कभी सोचता हूँ कि आराधना में जितना समय व्यतीत हुआ, सब बेकार गया और अब कोई आशा भी नहीं नजर आती।

भक्त की निराशा से श्री रामकृष्ण के होठों पर मुस्कुराहट तिर गई। उन्होंने सामने खेतों में काम कर रहे किसानों की ओर संकेत करते हुए कहा – किसान दो तरह के होते हैं। एक वे जो जन्म से किसान हैं। इन्हें खेतों में काम करना सहज, भला लगता है। वही इनका जीवन है। नफा हो या नुकसान, इन्हें तो बस खेती करनी है। और दूसरे हैं, जो नफा-नुकसान को सामने रखकर खेती करते हैं। लाभ होता है तो खुश हो जाते हैं, फसल खराब हो जाती है तो मुँह लटकाकर बैठ जाते हैं।

भक्त ने महापुरुष का संकेत समझ लिया, और अपने दिल में एक नयी किरण संजोये, लग गया अपनी साधना में। यही तो होती है गुरु की शिष्य पर कृपा।

कर्मयोग की साधना

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

निष्काम सेवा कार्यों में अपने को पूर्णत: संलग्न रखिए। बन्द कमरे में या गंगाजी के तट पर घण्टों ध्यान करने से कोई लाभ नहीं। आप कितने घण्टे ध्यान कर सकते हैं? अपने से पूछिए। आधा घण्टा, अथवा एक घण्टा, यही न? उसके बाद आपका मन भटकने लगता है, अनेकानेक विचार आते हैं, आप मनोराज्य में विचरण करने लगते हैं। आप अपने विचारों को नियन्त्रित करने तथा लक्ष्य पर मन को एकाग्र करने में सफल नहीं होते। उसका कारण क्या है? बुरे संस्कार ही इसके कारण हैं। आप में शम का गुण नहीं है। आपका मन सांसारिक विचारों से सदा अशान्त बना रहता है। आपने निष्काम सेवा के द्वारा अपने हृदय को शुद्ध नहीं बनाया है। अनवरत निष्काम सेवा द्वारा ही आप अपने बुरे संस्कारों का प्रक्षालन कर सकते हैं। तब आपको शान्ति तथा शम की प्राप्ति होगी तथा पूर्ण एवं गम्भीर ध्यान लग सकेगा।

बहुत-से साधक ऐसी शिकायत करते हैं कि सदा सेवा में संलग्न रहने के कारण उन्हें जप, ध्यान आदि का समय नहीं मिलता। मैं उनसे कहूँगा कि वे किसी एकान्त स्थान में या अपने कमरे में एक या दो दिन बन्द रहकर देखें कि कब तक ध्यान लगता है। नये साधक के लिए प्रतिदिन चौबीस घण्टे ध्यान करना सम्भव नहीं

है। मन किसी-न-किसी वस्तु में अपने को लगाये रखना चाहता है। क्या आपने किसी व्यक्ति को गंगा-तट पर ध्यान करते देखा है? आप निरीक्षण कीजिए। वह अधिक-से-अधिक एक घण्टा ध्यान करेगा और फिर वह कंकड़ों को फेंकने लगेगा या ऐसा ही कुछ व्यर्थ काम करने लग जायेगा, क्योंकि मन को विविधता चाहिए। आपको अपने मन को दूसरों की भलाई में सदा लगाये रखना चाहिए। सेवा ही आपको सब-कुछ प्रदान करेगी। सेवा के द्वारा आप आत्म-साक्षात्कार कर सकते हैं। इसके साथ-साथ आपको जप, ध्यान तथा अन्य साधनाएँ चालू रखनी चाहिए। समन्वय योग से ही आप पूर्णता प्राप्त कर सकते हैं।

वास्तव में कर्मयोग ही सभी साधकों के लिए सर्वोत्तम क्षेत्र है, क्योंकि यहाँ आपको सभी साधनाओं का सुन्दर समन्वय मिल जाता है, जो मन के लिए बहुत आकर्षक तथा आधुनिक व्यक्तियों के लिए भी अनुकूल है। आप कह सकते हैं कि उन्नत साधकों के लिए निष्काम सेवा की आवश्यकता नहीं है, परन्तु ऐसे साधक कितने हैं? वे बहुत ही कम हैं। बहुत उन्नत महात्मा ही अहर्निश ध्यान में निमग्न रह सकते हैं। परन्तु साधारण वर्ग के लिए यह समन्वय-योग ही सर्वोत्तम है।

बहुत-से लोग अपने घर-परिवार को त्याग कर शान्त वातावरण की खोज में निकल पड़ते हैं। बहुत कम लोग ही शीघ्र आध्यात्मिक उन्नति के लिए त्याग करते हैं। वे ऋषिकेश या उत्तरकाशी जैसे स्थानों में जाते हैं, परन्तु उन्हें मिलता क्या है? जहाँ भी वे जायें, एक ही किस्म की दुनिया है। क्यों? इसलिए कि वे अपने मन को सर्वत्र ले जाते हैं। मन सभी प्रकार की मलिनताओं से संतृप्त है। वह समाज तथा अन्य रोचक वस्तुएँ चाहता है। बिना काम के वह एकान्त में कभी नहीं रहता। अत: ऐसे साधकों के लिए कर्मयोग सर्वोत्तम है।

परिस्थितियों से समन्वय

मनुष्य को चाहिए कि वह सभी प्रकार की परिस्थितियों के अनुसार अपने को ढाल सके। मान लीजिए कि आप गम्भीर ध्यान कर सकते हैं, आप शान्तिप्रिय, एकान्तप्रिय साधक हैं, तब आप उत्तरकाशी जैसे किसी निर्जन स्थान में जा सकते हैं। परन्तु पाँच वर्ष के बाद जब आप समाज में आयेंगे तो आपका मन बड़ा अशान्त रहेगा, आप परिस्थितियों को बर्दाश्त नहीं कर सकेंगे। आप शोरगुल के बीच ध्यान नहीं कर सकेंगे तथा बाह्य वातावरण से बहुत जल्द ही प्रभावित हो जायेंगे। आप जल बिना मछली की भाँति रहेंगे। क्या यही आपकी पाँच वर्षों की साधना का फल है? आपके गहन ध्यान का लाभ ही क्या? आपका मन के ऊपर नियन्त्रण नहीं, आप कटु शब्दों को सहन नहीं कर सकते, आप अपमान, नुकसान आदि से अशान्त हो जाते हैं। इतने दिनों के एकान्तवास से क्या लाभ जब आप छोटे-छोटे प्रलोभनों के भी शिकार बन जाते हैं तथा सांसारिक वातावरण को सह नहीं सकते?

108

आपको उग्रतापूर्वक अपने मन को अनुशासित करना चाहिए, जिससे कि वह विक्षेप तथा कोलाहल में भी अविचल रह सके। आप दूसरों के अनुकूल बनें, सहनशील, मिलनसार तथा सेवापरायण बनें। आपको सभी प्रकार के मनुष्यों के साथ मिलकर रहना चाहिए तथा दूसरों के लिए हितकर होना चाहिए। आपको गरीब, बीमार तथा पीड़ित व्यक्तियों में उसी भगवान की पूजा करनी चाहिए जिसकी आप अपने हृदय-निकेतन में करते हैं, तभी आपकी साधना में सफलता है।

यदि आप पाँच वर्ष तक मौन रहें, तो आपकी बोली तुतली हो जायेगी। आप दूसरों से ठीक-ठीक बातें नहीं कर सकेंगे? क्या आपको अपनी साधना से यही पाना है? बुद्धिमान बनिए। विवेकी बनिए। अपने विचारों का विश्लेषण कीजिए। वीरतापूर्वक घोषणा कीजिए, 'मैं अपना सम्पूर्ण जीवन दूसरों की सेवा में बिताऊँगा, चाहे मुझे मुक्ति मिले या न मिले।' हर साधक की ऐसी ही वीरतापूर्ण घोषणा होनी चाहिए। आप जिस किसी के सम्पर्क में आयें, उसे भी इस बात की शिक्षा दें।

यदि आप सच्चे साधक हैं, तो एक बार *तत्त्वमसि* कह लेने पर ही आप समाधि में प्रवेश कर जायेंगे। राजा जनक इसी तरह के साधक थे। नौ बार *तत्त्वमसि* कहने पर श्वेतकेतु को आत्मज्ञान हो गया। परन्तु आप क्यों नहीं साक्षात्कार करते? जिस क्षण आप *तत्त्वमसि* सुनें, आपका हृदय पिघल जाना चाहिए। आपकी भावना गम्भीर होनी चाहिए, अन्यथा आप *सोऽहम्*, *शिवोऽहम्* और *अहं ब्रह्मास्मि* का हजारों बार जप क्यों न करें, उससे कोई लाभ नहीं, क्योंकि आप उसके महान् अर्थ का अनुभव नहीं करते। आप केवल समय का अपव्यय कर रहे हैं।

सत्संग के समय मैंने कुछ लोगों को माला घुमाते देखा है। इस वृन्दावन-विधि से कोई लाभ नहीं। जब सत्संग चल रहा है, तब वह जप के ऊपर पूर्णत: एकाग्रता नहीं रख सकता तथा सत्संग में क्या बताया जा रहा है, इसका भी ज्ञान नहीं रख सकता। इस प्रकार उसे किसी तरह का भी लाभ नहीं होता। सत्संग में बहुत लाभदायक बातें बतायी जाती हैं, यदि वह उनका पालन करे तो उसे कितने अच्छे विचार प्राप्त हों। वह बहुत लाभ उठायेगा, परन्तु वह समझता है कि बिना एकाग्रता के ही माला जपने से उसे अधिक लाभ मिल जायेगा। सच्चे बनिए। आध्यात्मिक जीवन मजाक नहीं है। गम्भीर सेवा के द्वारा हृदय के मल को धो डालिए तथा अशेष आत्मार्पण के द्वारा हृदय को रंग डालिए। उसमें विवेक तथा विचार की पॉलिश कीजिए। तभी आप सर्वशक्तिमान् ईश्वर को उसकी पूर्ण महिमा में अपने हृदय के अन्दर प्राप्त करेंगे।

समन्वय-साधना की सरल विधि

मैं आपको सुन्दर विधि बतलाता हूँ, जिससे काम करते हुए भी आप समन्वय-साधना का अभ्यास कर सकेंगे। एक या दो घण्टे खूब काम कीजिए। अब आपका

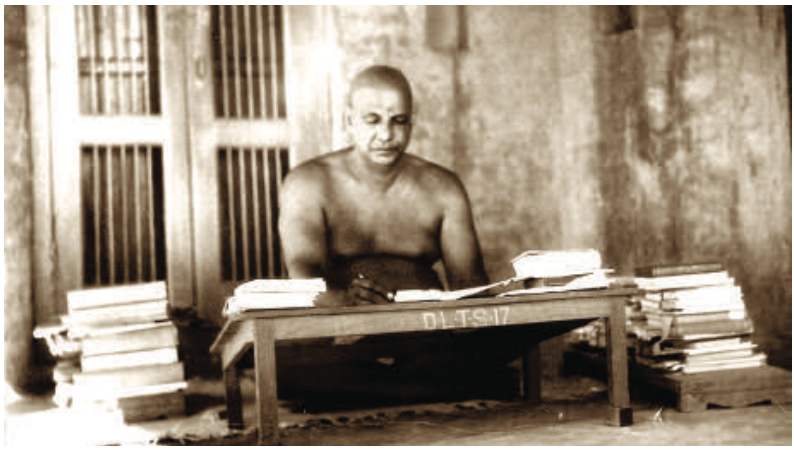

मन पूर्णत: काम से सन्तृप्त है। आप बाह्य जगत् की चेतना नहीं रखते। आप पूर्णत: डूबे हुए हैं। अब सब काम बन्द कर डालिए। आँखें बन्द कर लीजिए तथा धीरे-धीरे मन को समेट लीजिए। काम के बारे में भूल जाइए। धीरे-धीरे अपने विचारों को समेटकर इष्ट देवता पर एकाग्र कीजिए। शान्त बन जाइए। पूर्णत: शिथिल हो जाइए। आपका मन स्वभावत: लक्ष्य पर स्थिर होना चाहिए। दस मिनट के बाद पुन: अपनी पहली अवस्था में आकर काम करना प्रारम्भ कीजिए। आपको नयी शक्ति प्राप्त होगी, आप में स्फूर्ति आयेगी तथा आप आश्चर्यजनक रूप से काम कर सकेंगे।

यदि आप विघ्नों के कारण ध्यान करने में असमर्थ हैं, तो मन्त्र-पुस्तिका लेकर उसमें दस मिनट तक मन्त्र लिखिए। अपने विचारों को लिखित जप पर एकाग्र कीजिए। यदि यह भी रुचिकर न हो तो कोई सद्ग्रन्थ पढ़िए तथा उसके विचारों पर मनन कीजिए या गीता के कुछ श्लोकों को दुहराइए अथवा मानसिक जप प्रारम्भ कर दीजिए। इस तरह आप पाँच या दस मिनट का सदुपयोग कर सकते हैं। पुन: दो घण्टे काम कीजिए तथा इसी विधि को दुहराते जाइए। मन को विविधता प्राप्त होगी और आप अधिक दक्षतापूर्वक काम कर सकेंगे, साथ ही आप साधना भी करते जा रहे हैं।

इसी तरह आप ध्यान का भी अभ्यास कर सकते हैं। आप आधे घण्टे तक गम्भीर ध्यान कर सकते हैं, इसके बाद मन भटकने लगेगा। बहुत-से व्यर्थ विचार तथा बुरी बातों को ही सोचने लगेंगे। क्या आपने सावधानीपूर्वक इस पर विचार किया है? ध्यान करते समय मन में कितने विविध विचार प्रकट होते हैं? आपका ध्यान लक्ष्य से हट जाता है तथा आप उस क्षण उसकी चेतना नहीं रखते। आप बहुत-से विचित्र विचारों, विषयों तथा घटनाओं के बारे में सोचने लगते हैं। आपका ध्यान उन पर केन्द्रित हो जाता है। आपको बार-बार मन की बिखरी किरणों को समेटकर लक्ष्य पर लगाना होगा। यदि ऐसा करने में कठिनाई हो तो आपको ध्यान

बन्द करके कीर्तन प्रारम्भ करना चाहिए अथवा कुछ समय के लिए कुछ श्लोकों का पाठ करना चाहिए। आप कोई पुस्तक पढ़ सकते हैं अथवा इष्टमन्त्र लिख सकते हैं अथवा अपने कमरे के बाहर टहल सकते हैं। इससे आपका मन स्फूर्ति प्राप्त कर लेगा तथा आप पुन: गम्भीरतापूर्वक ध्यान कर सकेंगे। जब ध्यान श्रम-साध्य, कठिन तथा शुष्क होने लगे, तो आपको इस विधि को दुहराना चाहिए।

मैं आपको दूसरी विधि बतलाता हूँ। यदि आपको लगातार काम करने से थकावट अथवा अवसाद हो तो एक या दो दिन छुट्टी ले लीजिए। किसी निकट के स्थान में जाकर पूर्ण शिथिल होकर आराम कीजिए। पर्याप्त विश्राम कीजिए। अपने काम की चिन्ता न कीजिए। एकान्त स्थान में लम्बा भ्रमण कीजिए अथवा जंगल में इधर-उधर घूमिए। आप स्फूर्ति प्राप्त करेंगे। अब आप ताजगी के साथ अपना काम प्रारम्भ कर सकते हैं। इस तरह आप अधिकाधिक काम कर सकेंगे। अपनी सहज बुद्धि और विवेक का प्रयोग कीजिए तथा साधना में संलग्न रहिए।

आप देखेंगे कि शिक्षित जन भी हँसी-ठट्ठा तथा अन्य व्यर्थ के खिलवाड़ों में लग जाते हैं। वे समझते हैं कि उन्होंने अपने आनन्द को सुन्दर रूप से व्यक्त किया है, परन्तु यह अशिष्ट तथा मूर्खतापूर्ण है। एक मधुर मुस्कान से ही आनन्द को अच्छी तरह व्यक्त कर सकते हैं। इससे दूसरों को प्रेरणा, सान्त्वना तथा शान्ति मिलेगी। यह शिष्ट तथा भद्रतापूर्ण है। साधक को अट्टहास नहीं करना चाहिए। उसे नम्र, सुशील, शान्त तथा शिष्ट बनना चाहिए। अपरोक्षानुभूति के वास्तविक आनन्द को जोरदार ठहाके से व्यक्त नहीं किया जा सकता। ऐसा तो सांसारिक जन ही करते हैं। साधक को तो माधुर्य, नम्रता तथा सदाचार का मूर्त स्वरूप ही होना चाहिए।

कर्म को योग में परिणत किया जा सकता है

अपने सामने सदा आत्मसाक्षात्कार का लक्ष्य बनाये रखिए। निस्सन्देह आप नित्य हैं तथा आपके समक्ष अमरत्व है। आप अमर हैं। आप काल से परे हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि आप इस जन्म में साक्षात्कार प्राप्त करने के साधनों को ढीला छोड़ दें। आपको नहीं मालूम कि यह मानव जन्म आपको पुन: कब मिलेगा। आप पशु या देव-योनि में ईश्वर-साक्षात्कार नहीं कर सकते। इन दोनों प्रकार की योनियों में जीव अपने कर्मानुसार या तो कष्ट भोगता है या सुख। कर्म-भोग समाप्त हो जाने पर उसे पुन: मानव-जन्म को प्राप्त करना पड़ता है, जिससे उसे आत्म-साक्षात्कार का दूसरा सुयोग प्राप्त हो सके। इससे ही आप समझ लें कि इसी जन्म में आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करना कितना आवश्यक है। अन्तर्निरीक्षण द्वारा आपको प्रतिदिन यह पता लगा लेना चाहिए कि आप उन्नति कर रहे हैं अथवा नहीं। यह बहुत आवश्यक है, अन्यथा आप मार्ग को भूल सकते हैं। अन्तर्निरीक्षण कीजिए। पता लगाइए। माया आपको मोहित तथा पथ-भ्रष्ट करने के लिए सदा घात लगाये बैठी है। सावधान

रहिए। उसके बहुत रूप हैं। सेवा का अभिमान, पद का दर्प, सफलता का अहंकार, लाभ से आसक्ति, आराम की कामना, अधिकार का लोभ, अधिकार-प्राप्ति में बाधक जनों के प्रति द्वेष तथा गौरव की भावना से दूसरों पर शासन करने, उन्हें दबाने की भावना – ये कुछ स्वर्गिक अप्सराएँ हैं जो आपके चतुर्दिक् आपको प्रलोभित करने के लिए बाट देखती रहती हैं। सावधान!

आप अपने प्रत्येक कर्म को उस स्रोत के निर्माण के लिए प्रयुक्त करें, जिससे भगवद्विचार की धारा अविच्छिन्न रूप से सतत् प्रवाहित होती रहे। 'कर्म भगवान की पूजा है', इस भाव को बनाये रखिए। यह माया के प्रलोभनों को निष्क्रिय बनायेगा। यह भी जान लीजिए कि स्वरूपत: आप अकर्ता तथा अभोक्ता हैं। ईश्वर आपके द्वारा ही अपने अनिर्वचनीय उद्देश्यों को पूर्ण करता है, फिर आपको पुण्यापुण्य की भावना रखने से लाभ ही क्या? वह एक आत्मा जो आपमें है, वही सर्वत्र है। इस अखिल जगत् में अन्य कुछ नहीं है। कौन आपका मित्र है और कौन शत्रु? कौन आपसे बड़ा है और कौन आपसे छोटा? कौन आपको ठग सकता है और आप किसको ठग सकते हैं? प्रेम कीजिए, निश्छल प्रेम कीजिए।

सब-कुछ आपकी आत्मा ही है। क्या आप जान-बूझ कर अपना गला काट सकते हैं? जब आप मन, वचन अथवा कर्म से दूसरों को हानि पहुँचाते हैं, तो आप यही करते हैं। पुन: कल्पना कीजिए कि यदि आपकी उँगली आपको चोट पहुँचा दे, तो क्या आप उसे काट फेंकेंगे? इसी तरह जब आपका भाई गलती से आपको चोट पहुँचा दे, तो आप उससे बदला न लें। जो कुछ प्राप्त हो, स्तुति अथवा निन्दा, मान अथवा अपमान, राग अथवा द्वेष, लाभ अथवा हानि – सब-कुछ ईश्वर का आशीर्वाद समझ कर ग्रहण कीजिए। जो भी आपके सम्पर्क में आये, उसे ईश्वर की प्रतिमूर्ति समझिए। सभी को नमस्कार कीजिए। गधों को भी साष्टांग प्रणाम कीजिए। तिनके से भी अधिक नम्र होना, यही आपका आदर्श हो। जब आप सब में ईश्वर ही देखेंगे, तो आलोचना को आप सहन ही नहीं करेंगे, बल्कि उसे पसन्द भी करेंगे। कोई व्यक्ति यदि आपकी आलोचना करता है तो समझिए कि वह ठीक ही कह रहा है, क्योंकि वह ईश्वर है। आलोचना पर विचार कीजिए तथा ठीक निर्णय पर पहुँचिए। इस प्रकार आप प्रतिकार करने की भावना से बच जायेंगे। आप धैर्य तथा सन्मति का विकास करेंगे तथा हर व्यक्ति की शुभेच्छा को प्राप्त करेंगे। मौन तथा एकान्त में आपको अन्तर्निरीक्षण करना चाहिए तथा समालोचना-सम्बन्धी बातों पर विचार करना चाहिए। एकान्त में आपके आवेग शान्त हो जायेंगे तथा आप ठीक निष्कर्ष पर पहुँच सकेंगे। इन उपदेशों का पालन कर आप सभी कार्यों को, चाहे वे धार्मिक हों अथवा लौकिक, यहाँ तक कि परिवार की सेवा को भी पूजा-कार्य में बदल सकते हैं, जिससे आप आत्म-साक्षात्कार प्राप्त कर लेंगे। आप सभी पूर्ण कर्मयोगी बनें! आप सभी कर्मयोग से प्राप्त हृदय की शुद्धि के द्वारा नित्य तत्त्व का साक्षात्कार करें!

आत्मसुझाव की कला

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

सभी व्यक्तियों में किसी-न-किसी रूप में भय, कुण्ठाएँ और संवेगात्मक तनाव रहते हैं, भले ही वे चेतन-अचेतन रूप से उनके बारे में सजग न हों। ये सब चीजें मन को शान्त नहीं होने देतीं तथा ध्यान में बाधा पहुँचाया करती हैं। यह सूत्र वाक्य सदैव याद रखने योग्य है कि हम जैसा सोचते हैं, वैसा ही बनते हैं। यह वाक्य हमारे मानसिक अवरोधों को हटाने में मार्गदर्शक बनेगा। आत्मसुझाव में बहुत बड़ी शक्ति है। यदि हम जीवन में नकारात्मक दृष्टिकोण रखेंगे तो हमारा जीवन भी

नकारात्मक तथा निराशावादी हो जायेगा। यदि हम जीवन में रचनात्मक दृष्टिकोण रखेंगे तो हमारा जीवन आशावादी बनेगा। यदि हमारे मन में तीव्रता से यह विचार आने लगे कि हमें कैंसर हो जाएगा, तो एक दिन हमें सचमुच में कैंसर रोग का कष्ट भोगना पड़ेगा। आत्मसुझाव में ऐसी प्रबल शक्ति है।

वास्तव में ये सारी चीजें सिर्फ मन से ही नहीं, बाहर से भी आती हैं। हमारा मन बाहरी घटनाओं से लगातर प्रभावित होता रहता है। ये प्रभाव हमारे ऊपर हमेशा पड़ा करते हैं। जब हम कोई पुस्तक पढ़ते हैं तो हम उससे सुझाव प्राप्त करते हैं और हमारा आचरण वैसा ही बनता है। हम किसी से बातें करते हैं तो भी सुझाव प्राप्त करते जाते हैं, चाहे हम इसके प्रति सजग हों या न हों। जो कुछ हमारे मन में आता है, सुझाव के रूप में ही आता है। लोगों की बातों, हाव-भावों से भी हमें सुझाव प्राप्त होते हैं। सुझाव की इस शक्ति को आत्मसुझाव के रूप में उपयोग में लाने से हम अपनी मानसिक तनाव की स्थिति को सरलतम रूप से दूर कर सकते हैं। साथ-ही मन पर पड़ने वाले नकारात्मक प्रभावों को भी हम दूर कर सकते हैं जो हमारे अन्दर अवरोध पैदा करते हैं।

ध्यानाभ्यास के पूर्व की तैयारी में भी आत्मसुझाव का उपयोग आवश्यक है। आत्मसुझाव प्रारम्भ करने से पूर्व अपने अंदर परिवर्तन की आवश्यकता का अनुभव करना होगा। बिना तीव्र इच्छा और आवश्यकता के इसके उद्देश्य की पूर्ति नहीं होगी। यदि किसी में आधे मन से ही परिवर्तन करने की इच्छा है तो वह बार-बार इस विषय का चिन्तन-मनन करके परिवर्तन करने की उत्कट इच्छा जगा सकता है।

आप इस बात को अच्छी तरह समझें कि आध्यात्मिक पथ पर अग्रसर होने के साथ ही अनेक मानसिक बाधायें उपस्थित हो जाती हैं। जितनी अधिक प्रगति इस पथ में होगी, उतनी ही अधिक बाधायें चेतना के क्षेत्र में उभर कर राह रोकेंगी। इसलिए जैसे ही वे दिखायी पड़ें, उनके प्रति निषेधात्मक रुख अपनाना होगा। विपरीत भावनाओं, जैसे क्रोध की जगह क्षमा, को उनके स्थान पर बैठाना होगा, आत्मसुझाव देना होगा कि वे उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं हैं जितनी दिखायी पड़ती हैं।

चूँकि प्रत्येक व्यक्ति की समस्या अपने ढंग की होगी, इसलिए उसे अपने अनुकूल विधि की तलाश करनी होगी और बाधाओं से छुटकारा पाने के लिए अपने लिए विकसित की गई विधि का उपयोग करना होगा। उदाहरण के लिए, एक ऐसे व्यक्ति को लें जिसे अंधेरे से डर लगता है। चूँकि उसे अपना अधिकांश जीवन अंधकार में ही व्यतीत करना होगा, इसलिए मानसिक उपद्रव स्वाभाविक है। उसका मन जाने-अनजाने सदा तनावग्रस्त रहेगा। मन से इस भय के भूत को भगाने का उपाय यह है कि वह अनुभव करे कि यह भय कितना हास्यास्पद है। वह महसूस करे कि अंधकार मात्र प्रकाश का विपरीत रूप है। वह अपने अनुभव में लाये कि इस अंधकार से अन्य लोग भयभीत नहीं होते हैं। वह समझने का प्रयास

करे कि जब इस अंधकार का अपना कोई अस्तित्व नहीं है, और अन्य लोग इसकी परवाह नहीं करते, तो मैं क्यों भयभीत हूँ। इस प्रकार मन को निरन्तर आत्म-सुझाव देते रहने से निश्चित रूप से उसके मन से भय का भूत बाहर निकल भागेगा। इस प्रकार के सुझाव तब बड़े शक्तिशाली प्रमाणित होते हैं जब मन पूरी तरह विश्रान्त हो। इस प्रकार के उपचार से दृढ़मूल भय भी जड़ से समाप्त हो सकता है, बशर्ते भयग्रस्त व्यक्ति उसके निर्मूलन के लिए पूरे मन से इस प्रयास में लग जाए। सतत् प्रयास का परिणाम यह होगा कि अंधकार के प्रति एक बिल्कुल नई और उदासीन वृत्ति उस व्यक्ति के मन में उत्पन्न होगी, जो उसके अर्ध-चेतन मन में प्रवेश कर अंधकार के भय को निकाल बाहर करेगी।

आत्म-सुझाव सभी प्रकार के भय, मनोग्रन्थियों और अन्तर्द्वन्द्वों में एक कारगर उपाय सिद्ध होगा। आवश्यकता इस बात की है कि हम समस्या से मुक्त होने की प्रबल इच्छा रखते हों। प्रश्न यह है कि कोई व्यक्ति कैसे गहराई में बैठी इन समस्याओं का पता करे, जो उसके जीवन पर कुप्रभाव डाल रही हैं, जो उसका सुख-चैन छीनकर उसे तनावग्रस्त बना रही हैं। उसे इन जटिल समस्याओं की जानकारी तक नहीं है और अनजाने में ये उसके जीवन को खोखला बना रही हैं। अभ्यासी यह अनुभव करेगा कि योग और ध्यान के द्वारा ज्यों-ज्यों उसकी आत्म-सजगता बढ़ेगी, त्यों-त्यों उसकी समस्याएँ, भय, तनाव आदि सतह पर दृष्टिगोचर होने लग जाएँगे।

इन दृढ़मूल भावनात्मक और मानसिक तनावों को उभार कर सतह पर लाने के लिए ध्यान की एक विशेष विधि अन्तर्मौन है। अन्तर्मौन के नियमित अभ्यास के दौरान जो भी सकारात्मक या नकारात्मक अनुभव आए, उसे मन में या कागज पर नोट कर रखना चाहिए।

मानसिक और भावनात्मक समस्याओं को हटाने की चेष्टा में दूसरी आवश्यक बात यह है कि बाहरी घटनाओं और संकटों को मन से बाहर रोक रखने का अभ्यास करना चाहिये, क्योंकि ये मन पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। दूसरे शब्दों में, हमारा मन इतना मजबूत होना चाहिए कि बाह्य घटनाओं का प्रभाव ही हमारे ऊपर न पड़े। इसके लिये प्रत्येक व्यक्ति और वस्तु के प्रति धीरे-धीरे वैराग्य भाव पैदा करना होगा। इसका अर्थ यह नहीं कि हम शाक-सब्जी की तरह हो जाएँ, व्यक्तिगत सम्बन्धों से विलग होकर जीवन के उतार-चढ़ाव में भाग न लें। इसका तात्पर्य यह है कि सांसारिक व्यवहार तथा बाह्य क्रिया-कलापों में प्रेम, घृणा, आदि का प्रदर्शन करते समय आपके अंतर्मन को ये चीजें प्रभावित न कर सकें। संवेगात्मक भाव आपके व्यक्तित्व को अवश्य स्पर्श करें, लेकिन चेतना की गहराइयों में उनकी कोई छाप न पड़े।

यह सब मात्र अपनी समझ का ही खेल है। हम किसके साथ तादात्म्य स्थापित कर रहे हैं, इसी के प्रति सजग होना है। हम अपने को शरीर या मन समझेंगे तब सुख-दु:ख, इच्छा-अनिच्छा, प्रतिकूल और अनुकूल भावनाओं की लहरों से

उद्वेलित होंगे ही। इसके विपरीत अगर हम मन-शरीर से तादात्म्य स्थापित न करके चेतना के केन्द्र से जुड़ेंगे तो मानसिक-शारीरिक व्याधियाँ हमें कम ही छू पायेंगी, अर्थात् सुख-दु:ख का थोड़ा ही असर होगा। हम संसार की बाह्य उत्तेजनाओं की तुलना तालाब में उठने वाली जल की तरंगों से कर सकते हैं। लहरें जल की ऊपरी सतह को ही प्रभावित या उद्वेलित करती हैं, आन्तरिक तल को नहीं। हमें भी बाह्य प्रभावों से ऐसा ही हल्का सम्बन्ध रखना चाहिये। आध्यात्मिक साधक की अंतरात्मा की शांति को मन या शरीर के नकारात्मक स्पंदनों एवं बीमारियों से किंचित् भी प्रभावित नहीं होना चाहिए। ऐसा कहना आसान है, करना कठिन, परन्तु स्वयं के प्रति सजग होने के अनवरत अभ्यास से इस स्थिति की प्राप्ति हो सकती है, जिसमें व्यक्ति संसार की विक्षुब्धकारी एवं कोलाहलपूर्ण घटनाओं के बीच शान्त एवं अप्रभावित रह सकता है।

आत्मसुझाव का दूसरा महत्त्वपूर्ण उपयोग है, शारीरिक रोगों की चिकित्सा और रोकथाम। बहुत तरह के असाध्य रोग जैसे – कैंसर, ल्यूकीमिया आदि रोगों से ग्रस्त व्यक्ति भी अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति और संकल्प शक्ति के बल पर स्वस्थ होते देखे गये हैं। ध्यान के अभ्यास के बाद का समय आत्मसुझाव के लिए सबसे उत्तम है। प्रात:काल सोकर उठने के बाद या रात में सोने के पूर्व का समय भी उपयुक्त है। ऐसे समय हमारा मस्तिष्क सुझावों के प्रति ग्रहणशील रहता है। ऐसे अवसरों पर दृढ़-संकल्प और विश्वास के साथ कुछ मिनटों तक आत्मसुझावों को दुहराया जाए। उस समय हमेशा विश्वास रखें कि इच्छित परिवर्तन होगा ही और अपने अभीष्ट की प्राप्ति अवश्य होगी, क्योंकि आधे मन से दिये हुए आत्मसुझावों की सफलता में सन्देह है।

योग – एक स्वास्थ्यप्रदायी जीवनशैली

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

योग में उच्च रक्तचाप या दमा जैसी बीमारियों को रोग नहीं मानते। ये रोग के लक्षण हैं। उच्च रक्तचाप जैसे लक्षणों का जन्म तनाव के कारण होता है। तनाव चाहे घर-परिवार में हो, सामाजिक क्षेत्र में या कार्यक्षेत्र में, मन उस तनाव को झेल नहीं पाता। लोग कहते हैं दिमाग गरम हो गया। यही गरम दिमाग रक्तचाप का लक्षण है। चिड़चिड़ापन या मानसिक चंचलता, किसी काम में मन नहीं लगना, जल्दी ही विचलित हो जाना, अपने को शांत नहीं कर पाना, ये सब भी तनाव के ही लक्षण हैं।

वैसे तनाव अपने आप में खराब नहीं है। बिना तनाव के काम भी नहीं होता। जैसे धनुष की प्रत्यंचा को अगर आप ढीला कर दीजिए तो धनुष बेकार हो जायेगा। प्रत्यंचा में थोड़ा तनाव रहे तभी उसका उपयोग होगा। लेकिन उसी को खींचते जायें तो धनुष टूट जायेगा। और जब आपका धनुष टूटता है तब उसको तनाव नहीं, कष्टदायक परेशानी कहते हैं। इसी से फिर शारीरिक या मनोकायिक व्याधियाँ जन्म लेती हैं।

तनाव मुक्ति के लिए, उच्च रक्तचाप को नियंत्रण में रखने के लिये योग के सरल अभ्यास हैं। इनमें विशेषकर शिथिलीकरण और ध्यान के अभ्यास प्रमुख माने जाते हैं। शिथिलीकरण के अभ्यास इसलिये कि वे तंत्रिका-तंत्र को शांत और शिथिल कर सकें, ताकि तंत्रिका-उत्तेजना कम हो जाय। तंत्रिका उत्तेजना को शांत करना प्रथम लक्ष्य होता है, क्योंकि तंत्रिका-तंत्र ही एक ऐसा तंत्र है जिसका सम्बन्ध शरीर के अन्य सभी अंगों से रहता है। एक बार जब आपका तंत्रिका-तंत्र नियंत्रण में आ जायेगा तब श्वसन तंत्र, रक्त-संचरण तंत्र, ये सब धीरे-धीरे नियंत्रण में आ जायेंगे।

दूसरा अभ्यास है ध्यान। लेकिन वैसा वाला ध्यान नहीं जिसमें भगवान को प्राप्त करने का प्रयास किया जाए, बल्कि वह ध्यान जिससे मन को केन्द्रित और शांत करने का प्रयास किया जाए। ध्यान भी अनेक प्रकार के होते हैं। योगदर्शन में ध्यान की विधियों का एक अथाह सागर है। इन अभ्यासों में कुछ प्रत्याहार के सोपान के हैं, कुछ धारणा के और कुछ ध्यान के। प्रत्याहार के अभ्यास मन को एकाग्र तथा शांत करने के लिए किए जाते हैं, क्योंकि देखा गया है कि तनाव में मन कभी स्थिर नहीं रह पाता, हमेशा तनाव भरे विचार मन को प्रभावित करते रहते हैं और दिनभर में जो घटनाएँ घटती हैं उनकी छाप मन पर पड़ती है। मन तो एक आइने की तरह है, आइने के सामने जो कुछ आता है उसका प्रतिबिम्ब आइने में दिखलाई देता है। ठीक इसी प्रकार से मन के सामने जो कुछ आता है, इन्द्रियों के माध्यम से वे सभी अनुभव अपनी एक छाप छोड़ देते हैं।

अब इसके पीछे तो पूरा एक विज्ञान ही है जिसको लोग मनोविज्ञान कहते हैं। अभी हमलोग मनोविज्ञान की चर्चा में नहीं जा रहे हैं, किन्तु इतना निश्चित है कि वैचारिक और भावनात्मक उथल-पुथल को शांत करने तथा मानसिक प्रतिभा, सजगता, सकारात्मक व्यवहार, सृजनात्मक शक्ति – इन सबको जागृत करने तथा तीव्र बनाने के लिए स्वयं को एकाग्र कैसे करें, यह शिक्षा प्राप्त करना आवश्यक है। आधुनिक संदर्भ में जो तनाव, परेशानी, चिन्ता, क्लेश, दु:ख हम लोगों को होता है उसके पीछे एक ही कारण योग बतलाता है और वह है आंतरिक संयम, आंतरिक अनुशासन की कमी।

शिक्षा के आधुनिक स्वरूप में हमें व्यावसायिक शिक्षा मिलती है, आत्मिक शिक्षा नहीं। लोग कह देते हैं कि जहाँ तक हो सके, अच्छा सोचो, अच्छा करो, लेकिन इसको हम केवल एक दर्शन अथवा नैतिकता के रूप में अपना लेते हैं। सोचते हैं, विचार तो अच्छा है, कभी अवसर मिलेगा तो करेंगे और उस पर भी चल नहीं पाते हैं। कहने का तात्पर्य यह कि अपने आपको एकाग्र और शांत कैसे करना है, यह शिक्षा हमें न कभी परिवार में मिलती है, न विद्यालय में और इस शिक्षा के अभाव में हम लोगों का मन हमेशा बहिर्मुखी ही रहता है।

आज की परिस्थिति में संयम जीवन का अंग नहीं, बल्कि एक आदर्श बन कर रह गया है। ठीक इसी प्रकार से अच्छाई को हम आदर्श मानते हैं और बुराई को जीवन का सामान्य व्यवहार मान लेते हैं। कभी किसी के प्रति क्रोध है, कभी छल, कभी कपट, कभी ईर्ष्या, कभी अहंकार, कभी अशांति, तो कभी मोह है। साथ-ही कहते हैं कि अब तो यह हमारे जीवन का अभिन्न अंग है, इससे हम कैसे मुक्त होंगे? मानसिक चंचलता के कारण स्थिरता के अभाव में हम लोगों को तरह-तरह की परेशानियाँ झेलनी पड़ती हैं। इन परेशानियों का सम्बन्ध चाहे हमारे शरीर से रहे या परिवार से या व्यक्तिगत जीवन से, आस्था से रहे या कर्म से, जब हम इन्हें सम्हाल

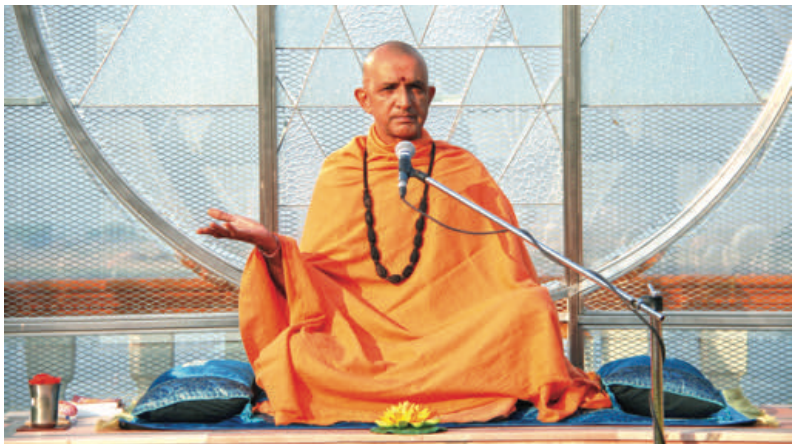

नहीं पाते, तब एक बीमारी का, व्याधि का बीजारोपण होता है। योग का यह विचार शुरू से रहा है और आज चिकित्सा विज्ञान भी इस विचार को स्वीकार करता है।

अभी तक चिकित्सा विज्ञान में जो उपचार की पद्धति रही है वह लक्षणात्मक उपचार पद्धति है। उच्च रक्तचाप एक शारीरिक और मानसिक अवस्था का लक्षण है। जिस दिन से आपको ज्ञात हुआ कि आपको उच्च रक्तचाप है,वह वास्तव में उसी दिन प्रारंभ नहीं हुआ, बल्कि वर्षों बाद आपको मालूम पड़ा कि आज आपको यह तकलीफ है। वर्षों बाद जब मालूम पड़ता है कि मुझे यह तकलीफ है तब मैं दवाई के माध्यम से उस लक्षण का उपचार करता हूँ। मैं कारण का उपचार नहीं कर रहा हूँ। उच्च रक्तचाप है, दवाई ले ली ताकि रक्तचाप कम हो जाए। दमा का प्रकोप हुआ, दवाई ले ली ताकि दमा कम हो। मधुमेह हो गया, हमने इन्सुलिन ले ली ताकि शर्करा-स्तर बढ़े नहीं। इसका सीधा मतलब तो यही हुआ कि हम शरीर में प्रकट हो रहे लक्षण का उपचार कर रहे हैं।

योग में यह प्रयास किया जाता है कि कारण का निदान हो और कारण के निदान में समय तो निश्चित रूप से लगता है, क्योंकि कारण तो मन की गहराई में है। जिस प्रकार वृक्ष की जड़ें धरती के भीतर रहती हैं, उसी प्रकार रोग की जड़ मन तथा प्राण के भीतर रहती है। प्राणों में कमी हो तो स्फूर्ति, शक्ति और सामर्थ्य में कमी आती है। अगर जड़ मन में है तब निराशा, भय, आक्रोश, इस प्रकार अलग-अलग परिस्थिति से हम गुजरते हैं। किसी रोग की जड़ तक पहुँचने के लिए जो योग का सहारा लेते हैं, योग को माध्यम बनाते हैं, उन्हें थोड़ा ज्यादा धैर्यवान् होना पड़ता है, क्योंकि यह कोई दवाई तो है नहीं कि खा ली और दस-पन्द्रह मिनट या आधे-एक घण्टे के बाद आराम मिल जाये। लेकिन जो फायदा योग के द्वारा होता है, वह स्थायी होता है, इसीलिये योग चिकित्सा पद्धति आज प्रचलित भी हो रही है।

योग चिकित्सा पद्धति केवल भारत में नहीं, बल्कि विश्व में प्रचलित हो रही है, क्योंकि केवल रोगियों ने नहीं, चिकित्सकों, वैज्ञानिकों, मनीषियों ने भी यह देखा, यह अनुभव किया कि योग के नियमित अभ्यास से हम रोग को जड़ से समाप्त कर सकते हैं। भले ही इसमें एक महीने के बदले एक साल या पाँच साल का समय लग जाये, लेकिन स्वास्थ्य लाभ निश्चित है। चालीस साल की बीमारी क्या एक महीने में ठीक कर पायेंगे? चालीस साल की बीमारी का स्वरूप वैसा ही है जैसा चालीस साल पुराने पेड़ का होता है। उसकी जड़ें इतनी मोटी हो गई होती हैं और इतनी दूर तक भीतर प्रवेश कर चुकी रहती हैं कि उन जड़ों को समाप्त करने के लिए आपको पूरा ही खोदना पड़ेगा। केवल ऊपर से काट दिया और कह दिया कि अब तो रोगमुक्त हो गए, यह सही नहीं होगा क्योंकि जड़ तो अभी तक है। घर की दीवार में एक छोटा-सा पीपल का पेड़ उग आता है, उसको हटाने में कितनी मेहनत करनी पड़ती है। उसको काटते हैं, उसमें दवाई डालते हैं, फिर बड़ा होता है, फिर काटते हैं, फिर दवाई डालते हैं, फिर उसको जलाते हैं, फिर तरह-तरह के उपचार करते हैं। ठीक उसी प्रकार से बीमारी भी है। उसको खींचते रहिये, निकालते रहिये, जल्दी से निकलती नहीं है। लेकिन यह पाया गया है कि शनै:-शनै: योगाभ्यास से लाभ होता है।

जितनी लम्बी बीमारी हो, उसके उन्मूलन के लिए उतने अधिक दिन तक योगाभ्यास करना होता है। इसका एक अनुपात हम आपको सांकेतिक रूप से समझा देते हैं। दस साल की बीमारी हो तो दस महीने तक नियमित योगाभ्यास करना चाहिए, एक साल बराबर एक महीना। यह दस प्रतिशत जो कहा गया है, सत्य है। मनीषियों ने केवल सैद्धान्तिक रूप से नहीं, व्यावहारिक रूप से इसका अनुभव किया है।

आजकल दूसरी मुख्य समस्या है स्पॉण्डिलाइटिस। इस बीमारी का बहुत ही सरल कारण है। स्पॉण्डिलाइटिस इसलिए होता है कि हमलोगों ने आज तक सीधा बैठना सीखा ही नहीं। कार्यालय में जहाँ पर हम लोग काम करते हैं या घर में हम लोगों की जो मेज होती है, वह तो सपाट होती है, इसलिए हमेशा सिर झुकाकर लिखना पड़ता है। तो वर्षों तक मेरुदण्ड की स्थिति हमेशा मुड़ी हुई रहती है, जिसके कारण गर्दन पर दबाव पड़ता है। बचपन से ही हम लोगों को एक आदत लग जाती है हमेशा सिर को नीचे रखने की, और हम लोग उचित व्यायाम वगैरह भी नहीं करते जो उस प्रक्रिया या उस अवस्था को ठीक कर सके।

बीमारियाँ आज सामान्य होती जा रही हैं। विदेशों में शारीरिक भंगिमा पर बहुत काम हो रहा है। इतना तो समझ में आता है कि हमलोगों को काम करना ही है, काम के बिना तो रह नहीं सकते, इसलिए वे लोग तरह-तरह के डिजाइन की कुर्सी और मेज वगैरह बनाने लगे हैं, जिसमें शरीर को कम-से-कम समस्या का

सामना करना पड़े और शरीर सीधा रहे, सिर सीधा रहे। भारत में वह सब आने में समय लगेगा, लेकिन यह प्रक्रिया शुरू हो गई है। हमलोगों के देश में शुरू से कहा जाता है सीधा बैठो। आप लोगों को याद होगा जब बचपन में स्कूल जाते थे और झुककर बैठते थे तो मास्टर जी कहते थे सीधा बैठो। घर में भी माता-पिता बच्चों को टोक देते थे अगर वे लोग बहुत देर तक झुककर रहते थे, चलो सीधा बैठो। इस प्रकार भी असर पड़ता है। दूसरी बात यह कि हम लोग खेल के अतिरिक्त दूसरा कोई शारीरिक व्यायाम नहीं करते हैं। खेल तो केवल स्कूल में होता है, बाद में जो निन्यानवे का चक्कर चलता है तो सब खेल-कूद छूट जाता है। शरीर में जो एक गतिशीलता होनी चाहिए, वह नहीं रहती है।

इस गतिशीलता के अभाव में शरीर कमजोर पड़ जाता है। पहले लोग कसरत किया करते थे, दण्ड-बैठक करते थे, मुग्दर चलाते थे, उसी से शरीर मजबूत हो जाता था। अगर कोई व्यक्ति नियमित रूप से कुछ शारीरिक श्रम के अभ्यास करे तो जोड़ों से सम्बन्धित रोग नहीं होगा, इतना हम आपको गारण्टी के साथ बोल सकते हैं। गठिया आजकल बहुत हो रहा है लोगों को, बुढ़ापे के कारण नहीं, बल्कि शारीरिक श्रम की कमी के कारण। बीस साल पहले भी गठिया था, लेकिन इतनी मात्रा में नहीं जितना आज है। पहले बुजुर्ग लोग कहा करते थे कि जोड़ों में दर्द हो रहा है, लेकिन आजकल जवान लोगों को गठिया हो गया है, चल नहीं पाते हैं। जवान लोगों को क्यों हो रहा है? इसलिए कि जीवन में व्यायाम का अभाव हो गया है।

जब हम योग के आसन-प्राणायाम करते हैं तो तीस-चालीस साल से जो जोड़ आपके कड़े हो रहे हैं, जहाँ पर गतिशीलता का अभाव हो गया है, उनमें गति आती है और पन्द्रह-बीस दिन में काया परिवर्तन हो जाता है। पवनमुक्तासन के अभ्यास बहुत ही लाभकारी हैं। इनके लाभों को जब देखा गया तो पाया गया कि योग के जो कठिन अभ्यास होते हैं, जैसे चक्रासन या मयूरासन या शीर्षासन है, जिनको हम लोग टेलीविज़न वगैरह में भी देखा करते हैं, उन सभी कठिन अभ्यासों से पवनमुक्तासन का अभ्यास उत्तम है। इस पर एक शोध भी हुआ है। बुढ़ापे में जो स्मृति ह्रास होता है, उस पर अमेरिका के विश्वविद्यालय में एक प्रयोग किया गया। चालीस, साठ और अस्सी वर्ष के लोगों को यह अभ्यास कराया गया, क्योंकि उन लोगों ने यह जान लिया है कि हर बीस साल की अवधि में हॉर्मोनों में परिवर्तन होते हैं।

व्यक्ति के हॉर्मोन बीस साल की उम्र में परिपक्व होते हैं, उसके बाद फिर स्थायी हो जाता है। चालीस की उम्र में फिर ह्रास शुरू होता है, फिर स्थायित्व आता है। साठ में फिर ह्रास होता है, फिर स्थायित्व आता है। अस्सी में फिर ह्रास होता है, फिर स्थायित्व आता है। अर्थात् हर बीस साल में एक कमी होती है और अगर इन हॉर्मोनों को या मस्तिष्क के केन्द्रों में हम किसी प्रकार ऊर्जा संचरित कर सकें तब यह कमी नहीं होगी। यह जो शोध हुआ उससे वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि

चालीस वर्ष की उम्र में अगर कोई व्यक्ति सभी अभ्यासों को छोड़कर, चाहे जॉगिंग हो, जिमनेज़ियम हो, या और कुछ हो, एक साल तक नियमित पवनमुक्तासन का अभ्यास करे तो उसकी स्मृति में ह्रास नहीं होगा। एक साल के बाद फिर छोड़ दे। फिर उन्नीस साल के बाद, जब वह साठ का हो रहा हो, तब एक साल तक लगातार करे, फिर छोड़ दे। फिर अस्सी की उम्र में करे, एक साल लगातार। यह एक तरीका है।

स्मरणशक्ति की वृद्धि के लिए दूसरा तरीका एक इंजेक्शन है। एक इंजेक्शन का दाम एक हजार डॉलर है और कम-से-कम दस इंजेक्शन लेने होते हैं। मतलब दस हजार डॉलर। आपको अपने मस्तिष्क और स्मृति की तीव्रता को बनाये रखने के लिए हर बीस साल में दस हजार डॉलर खर्च करने हैं। या फिर आराम से घर में बैठ कर फोकट में एक साल तक पवनमुक्तासन कीजिए, चयन आपका है। और जो हो गया उसके लिए क्या किया जा सकता है, फिर से तो आपका शरीर जवान नहीं बनेगा सोलह साल वाला। जो हो चुका है, हो चुका है। जो गड़बड़ी हो गई है, जो पौधा बीमार निकल गया है, बीमार ही रहेगा, चाहे कितना ही उपचार क्यों न कीजिए। हम आपको ये सब बातें इसलिए बतला रहे हैं कि अगर हम योगाभ्यास में नियमित रहें, योग के अभ्यासों में श्रद्धा रहे और हम एक संतुलित तथा संयत दिनचर्या अपनाकर चलें तो हमें निश्चित रूप से लाभ होगा। पवनमुक्तासन के अभ्यास में केवल अंगुलियों को आगे-पीछे करना है, ऐसा मत मानिये। योग को एक जीवन विधि के रूप में अपनाने का प्रयास कीजिए, लाभ अवश्य होगा।

योग के प्रति कृतज्ञता

महोदय,

वर्ष 2001 में मैं पटना में स्टेट बैंक ऑफ़ इंडिया में कार्यरत था। उस समय मैंने आपके पटना केंद्र में स्वामी प्रज्ञातीर्थ जी के निर्देशन में 6 माह के कोर्स के अंतर्गत योग प्रशिक्षण प्राप्त किया। उस समय मेरी आयु 52 वर्ष की थी और मैं निम्नलिखित बीमारियों से ग्रसित था –

- अस्थमा
- कंधे में भयंकर दर्द
- बवासीर
- डायबिटीज़

पटना से प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद मैं प्रतिदिन योगाभ्यास कर रहा हूँ। मैं ज्यादा कुछ नहीं करता हूँ, केवल सूक्ष्म व्यायाम, सूर्य नमस्कार और प्राणायाम में भ्रामरी, भस्त्रिका, कपालभाति और नाड़ीशोधन करता हूँ। शवासन में यौगिक स्वशन भी करता हूँ।

आज मेरी उम्र 71 वर्ष की हो चुकी है और मैं लखनऊ में रहता हूँ। स्वामी प्रज्ञातीर्थ जी और उनके सहयोगियों द्वारा दिए गए प्रशिक्षण की बदौलत मैं स्वयं को सुचारू रूप से चला रहा हूँ। वर्ष 2001 में मैं जीवन से बहुत निराश हो चुका था और मुझे लगता था की मेरा अंत निकट है। अब मेरा अस्थमा कंट्रोल में रहता है, हालाँकि मैं एक इनहेलर का प्रयोग भी करता हूँ। मेरे कंधे के दर्द और बवासीर में कोई समस्या नहीं है। डायबिटीज़ भी कंट्रोल में है, हालाँकि उसके लिए कुछ दवाई भी लेता हूँ।

मैं सुधरे हुए स्वास्थ्य के लिए स्वामी प्रज्ञातीर्थ जी और आपके योग विद्यालय को नमन करना चाहता हूँ। आपको मेरी शुभकामनायें, आप ऐसे ही आगे भी जन मानस की सेवा में नए कीर्तिमान स्थापित करते रहें।

आपके विद्यालय का ऋणी,
अनिल कुमार

योग का मुख्य लक्ष्य

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

'वह योग क्या जो भोगों के बीच सध न सके? जीवन का प्रत्येक कर्म पूर्ण एकाग्रता के साथ करो। छोटा हो या बड़ा, प्रत्येक कर्म के रग-रग में तुम्हारी एकाग्रता और भाव के मोती पिरोए जाने चाहिए। भोग है सीढ़ी और योग मंजिल। भोगों की सीढ़ी पर पैर रखते हुए ऊपर चढ़े चलो। भोगों के रस का चींटा बनकर स्वाद लोगे, तो उसी में डूबकर प्राण गवाँ देने पड़ेंगे। किन्तु मधुमक्खी बनोगे, तो भोगों का संचय करके भी तुम्हारे पंख उससे अलग रहेंगे। मधु का स्वाद लो, पर आकाश में ही रहो, अर्थात् अलिप्त रहो।'

जब योग के बारे में विचार प्रस्तुत करना होता है, तो समझ में नहीं आता कि इसके बारे में क्या बोला जाए। जिस तरह समुद्र में केवल मछली या रत्न नहीं होते, बल्कि अनेक वस्तुएँ होती हैं, उसी तरह योग में भी अनेक सम्पदाएँ छिपी हैं। जिसे जितनी जरूरत है, वह उससे ग्रहण कर सकता है। योग केवल आध्यात्मिक व्यक्ति के लिए नहीं है, बल्कि ढोंगी या रोगी व्यक्तियों के लिए भी है। जब योग के बारे में बात करते हैं, तो मुझे ऐसी कठिनाइयाँ हमेशा होती हैं कि किसके लिए क्या बोला जाए, क्योंकि जब योग-उपचार के बारे में बोलता हूँ, तो लोग कहते हैं कि ध्यान के बारे में क्यों नहीं बोले और यदि ध्यान के बारे में बोलता हूँ, तो लोग कहते हैं कि बीमारी के बारे में क्यों नहीं बोले?

योग में ध्यान का स्थान सर्वोपरि है, क्योंकि ध्यान के द्वारा ही आत्म-शक्ति का ज्ञान और मानसिक रोगों का उपचार होता है। जिसके विचार जितने पवित्र होते हैं, उसको उतनी ही जल्दी ध्यान लगता है। अगर हमारे विचार और आचरण पवित्र नहीं हैं, तो ध्यान नहीं लगता। ध्यान लगाने में मंत्र-जप का अभ्यास बड़ा ही उपयोगी है। ध्यान करते समय मन बहुत भागता है और मंत्र-जप से आत्मबल मजबूत होता है। मंत्र-जप के सहारे चित्त को एकाग्र किया जाता है। किसी मंत्र के उच्चारण करने या उसकी जिज्ञासा में तल्लीन होने अथवा किसी मूर्ति पर ध्यान करने से आत्मा की परोक्ष अनुभूति का अभ्यास होता है। योग का लक्ष्य है मन को चट्टान की तरह मजबूत बनाना।

बीमारी और परेशानी का मुख्य कारण है मन का चंचल होना। आज प्रत्येक व्यक्ति का मन चंचल है। इसी चंचल मन के कारण वह परिस्थितियों का दास बन गया है और इसी के कारण उसे अपने जीवन में अनेक विपत्तियों का सामना करना पड़ रहा है। तुम किसी को भी दोष मत दो, क्योंकि सब तुम्हारे चंचल मन के कारण ही होता है। यदि संसार में किसी वस्तु को पाना चाहते हो, तो मन की चंचलता

दूर करो। जिस दिन तुम्हारा मन शान्त हो जाएगा, उस दिन तुम अपने प्रारब्ध, अपनी परिस्थितियों, अपनी बीमारियों तथा अपने घर को बदल कर शक्तिमान् बन जाओगे, देवता बन जाओगे। कबीरदास जी ने तो स्पष्ट रूप से कहा है –*'मैं तो उन संतन का दास, जिन्होंने मन मार लिया।'*

चाहे राजयोग हो, भक्तियोग हो, कुण्डलिनी योग हो, लय योग हो या अन्य कोई योग हो, सबमें केवल एक बात बतलाने की चेष्टा की गई है और वह यह है कि चंचल मन को कैसे शान्त किया जाए। यह मन केवल रात या दिन में नहीं, बल्कि निद्रावस्था में भी चंचल रहता है, क्लोरोफॉर्म और एनेस्थीसिया देने पर भी चंचल रहता है। इस मन को कैसे शान्त किया जाए? प्रश्न उठता है कि यदि मन चंचल है तो क्या नुकसान है? सामान्य व्यक्ति चंचल मन के कारण होने वाली दुर्घटनाओं का अनुमान नहीं लगा सकता। वह घर, सम्पत्ति, प्रारब्ध या सरकार को दोष देगा, मगर अपने ऊपर दोष नहीं लेगा। वह कभी यह नहीं कहेगा कि मेरा मन चंचल था, इसलिए यह सब हो गया।

योगशास्त्र में सबसे पहली बात यही समझायी गयी है कि मन में उत्पन्न होने वाले संकल्प-विकल्प और विक्षेप को कैसे रोका जाए तथा उन्हें कैसे निष्प्रभाव किया जाए। इसे एक उदाहरण के द्वारा समझा जा सकता है। जब कोई घटना घटती है तो उसका मन पर प्रभाव पड़ता है। उस घटना के कारण मन में संस्कार जम जाते हैं और उससे सम्बन्धित संकल्प-विकल्प मन में उठते रहते हैं। दिन-रात वही चीजें मन में आती हैं, चाहे वह विद्यार्थी हो, व्यापारी हो, अधिकारी हो या गृहिणी। किसी एक घटना पर मन आसक्त हो जाता है, फिर उनके दिमाग में घूम-

घूमकर वही विचार आते हैं। लाख प्रयत्न करने पर भी तुम अपने को उन विचारों से अलग नहीं कर पाते। तुम्हारे पास मन को उन घटनाओं से अलग करने के लिए कोई उपाय नहीं है। तुम लोग मन बहलाने के लिए कभी सिनेमा चले जाते हो, कभी पी लेते हो और कभी-कभी आमोद-प्रमोद से अपने को सन्तुष्ट करते हो, मगर अन्त में वहीं आ जाते हो, जहाँ पहले थे। यह मानसिक रोग सबको है। इस रोग से छुटकारा पाने के लिए तुम्हें योग के पास आना ही होगा।

इस सदी में मनोविज्ञान शास्त्र का उद्भव हुआ जिसमें मानसिक रोगों की बात कही जाती है, मगर यह आज की बात नहीं है। आज से कई हजारों वर्षों पूर्व भारतवर्ष के ऋषि-मुनियों ने जान लिया था कि मनुष्य का मन सुख-दुःख में, काम-क्रोध में, ईर्ष्या-द्वेष में उलझता है। ये सब मन में संकल्प-विकल्प को जन्म देते हैं। प्रत्येक घटना का प्रभाव मन पर पड़ता है। मन पर पड़ने वाले ये प्रभाव हमें नित्य-निरन्तर बीमार करते रहते हैं। इन बीमारियों के बारे में हमलोगों को पता नहीं चलता। जैसे-जैसे मन पर जीवन की घटनाओं का प्रभाव पड़ता है, वैसे-वैसे शरीर के अन्दर की रासायनिक प्रक्रियाएँ बदलने लगने लगती हैं, शरीर के अन्दर का तापमान बदलने लगता है, खून के गुण-धर्म बदलने लगते हैं और हमें बीमारी पकड़ लेती है, फिर उसके लिए हम दवाई तैयार करते हैं।

भारत में योगनिद्रा का उद्भव हुआ। यहाँ मन के रहस्यों को खोला गया। रोग, विकार, दुष्चरित्र, अपराधी व्यक्तित्व, मानसिक कमियाँ, स्मृति-नाश का कारण मन ही है, न कि वायरस और बैक्टीरिया। इसलिए योग शास्त्र का प्रमुख विषय

मन है। चाहे कर्मयोग, राजयोग या ज्ञानयोग के विषय में पढ़ो, सभी में एक ही बात कही गयी है कि मन के अन्दर उत्पन्न होने वाले संकल्प-विकल्प एवं विक्षेपों को कैसे रोका जाए। उदाहरण के तौर पर जब टेप चलता है तो हम लोग कहते हैं बन्द कर दो, ये विक्षेप के कारण हैं, मगर मन पर नित्य-निरन्तर जीवन की घटनाएँ अंकित हो रही हैं, जिन्हें बन्द करने का कोई उपाय नहीं है। इनको रोकने का एक ही उपाय है – वह है मन पर विजय पाना। जब तुम अपने मन के स्वामी बनोगे, तब अपने जीवन के स्वामी बनोगे। इतिहास में तुमने हजारों लोगों की वीर गाथाएँ सुनी हैं, जिनकी पूजा करते हो, जिनकी विरुदावलि गाते हो, उन लोगों ने अपने मन को अपने वश में कर उस पर पूर्ण विजय प्राप्त की थी। इसी आधार को लेकर योग शास्त्र का जन्म हुआ।

तुम्हारे मन में उत्पन्न होने वाले जो विचार हैं, वे मन नहीं, मन की वृत्तियाँ हैं। कामवासना मन नहीं, मन की वृत्ति है। इसी प्रकार क्रोध, चिन्ता, दु:ख, सुख, आदि सभी मन की वृत्तियाँ हैं। मन में जो लहरें उठती हैं, उन्हें ही वृत्तियाँ कहा जाता है। जैसे समुद्र, नदी और सरोवर में तूफान, आँधी और हवा के चलने पर लहरें उठती हैं, उसी तरह जब तुम्हारे मन पर बाहरी घटनाओं का आघात पड़ता है, तब मन में अनेक प्रकार की लहरें उठती हैं, और ये तरंगें ही चित्तवृत्तियाँ हैं।

जिस जाग्रत मन के द्वारा तुम इन्द्रियों के विषयों का अनुभव करते हो, मन केवल उतना ही नहीं है। चाहे सोने के लिए गोली लो, क्लोरोफॉर्म लो, गांजा-भाँग लो या बेहोश हो जाओ, मगर मन रहता है। मन तो स्वप्न अवस्था में और सुषुप्ति अवस्था में भी रहता है। जब तक ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो जाती, समाधि की प्राप्ति नहीं हो जाती, मन पर पूरी तरह से नियन्त्रण नहीं हो जाता, तब तक मन रहेगा।

मन के कारण ही कुछ लोगों को नींद नहीं आती, वे पागल हो जाते हैं। वे सोचते हैं कि यदि गोली लेकर सो जाएँगे, तो छुट्टी मिल जाएगी, मगर ऐसा नहीं होता। हमारे शास्त्र कहते हैं कि अनुभव से बीज पैदा होता है। वह बीज संस्कार के रूप में हमारे चित्त में दब जाता है तथा वही मन में विचार लेकर प्रकट होता है। अत: मन पर नियंत्रण के लिए साधना की पद्धति बतलायी गयी है। जब हम साधना के लिए बैठते हैं और चित्त को एकाग्र करने का प्रयत्न करते हैं तो हमारे मन में अनेक प्रकार के विचार उत्पन्न होते हैं। जिस समय तुम एकाग्रता का अभ्यास शुरू करोगे, उसी समय तुम्हारे मन में इधर-उधर से अनेक प्रकार के विचार आने लगेंगे। इसका मतलब है कि जितने भी अनुभव हैं, वे सब तुम्हारे अन्दर हैं और साधना की अवस्था में प्रकट होते हैं। ऐसी स्थिति में साधना की पद्धति को ठीक तरह से समझना चाहिए। जब हम साधना करते हैं तो मन में संकल्प-विकल्प उठते हैं, उन्हें रोकना नहीं चाहिए। आप अपने मन के विचारों को जितनी बार दबाएँगे, उतनी ही बार वे पूरी ताकत के साथ ऊपर आने की कोशिश करेंगे। अत: विचारों

को दबाना नहीं चाहिए। मंत्र-जप करते समय या साधना करते समय उभरने वाले संकल्प-विकल्प को आने दो और अपनी साधना चालू रखो। ऐसा करने से बहुत-से विचार आते हैं और कभी-कभी तो सन्तुलन भी नहीं हो पाता। बहुत-से लोग इसे संभाल नहीं पाते, इसलिए साधना मार्ग में पहले हठयोग को लिया गया है।

हठयोग शास्त्र में लिखा है कि यदि प्राण नियन्त्रण के बाहर चला जाए तो मन भी नियन्त्रण के बाहर चला जाता है। यदि मन नियन्त्रण के बाहर चला जाए तो प्राण भी नियन्त्रण के बाहर चला जाता है। मन के अन्दर उठने वाले संकल्प-विकल्प को जीतने के लिए प्राणों को नियन्त्रित करना चाहिए। इसके लिए प्राणायाम का अभ्यास सर्वोत्तम है।

हठयोग में मनस्तत्त्व और प्राण तत्त्व एक दूसरे के साथ सामंजस्यपूर्वक काम करते हैं। मेरुदण्ड के दाहिने व बायें भाग में दो नाड़ियाँ हैं, जिनमें प्राण नीचे से ऊपर की ओर प्रवाहित होता है। बायीं तरफ की नाड़ी, जिसे इड़ा कहते हैं, मनस्तत्त्व का प्रतिनिधित्व करती है और दायीं तरफ की नाड़ी, जिसे पिंगला कहते हैं, प्राणतत्त्व का। योगशास्त्र के अनुसार इनसे अन्य नाड़ियाँ जुड़ी हैं, जो बहुत ही सूक्ष्म हैं, जैसे, ब्रह्म, अलख, उषा इत्यादि। जिस प्रकार तार से बिजली प्रवाहित होती है, उसी प्रकार इड़ा और पिंगला नाड़ियों से शक्ति प्रवाहित होती है। इस तरह शरीर में सिर से पैर तक एक-एक स्थान इन नाड़ियों के साथ सम्बद्ध है। प्राण और चित्त के द्वारा जीवन का ज्ञान होता है। प्रत्येक अंग इन दो प्रकार की ऊर्जाओं से संयुक्त है। जहाँ प्राण होता है, वहाँ चित्त होता है तथा जहाँ चित्त होता है, वहाँ प्राण होता है। मन:शक्ति और प्राणशक्ति हमारे शरीर में स्थित चक्रों (मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि आदि) के माध्यम से एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र की ओर जाती हैं। इस वितरण क्रिया के कारण ही हमारे शरीर में जीवन है। यदि शरीर के किसी भाग में रोग हो जाता है तो इसका मतलब शरीर के उस भाग में शक्ति का अभाव है। वहाँ पर ऊर्जा का प्रवाह रुक गया है, इसलिए वह अंग बीमार है। इस स्थिति में आसनों द्वारा ऊर्जा प्रवाह के अवरोध को दूर करते हैं।

आजकल छोटे-से बच्चे के दिमाग में भी कितना तनाव रहता है। पढ़ना है, पास होना है, आदि। बचपन से बुढ़ापे तक हमारा जीवन तनावग्रस्त रहता है। परिणामत: पारिवारिक जीवन सुखी और सामाजिक जीवन निर्भय नहीं हो पाता। बौद्धिक जीवन निर्विकार नहीं रहता, इसलिए आध्यात्मिक लक्ष्य भी स्पष्ट नहीं रहता। योग की भाषा में इसे क्लेश कहते हैं। तुम्हें स्थिरता का ज्ञान होना आवश्यक है। गीता के दूसरे अध्याय में अर्जुन ने श्रीकृष्ण से स्थितप्रज्ञ पुरुष के बारे में पूछा है –

स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव।
स्थितधी: किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम् ॥2.54॥

'हे भगवन्! जिसकी बुद्धि स्थिर है, ऐसे समाधि में स्थित महापुरुष का व्यवहार कैसा होता है, उसका चाल-चलन कैसा रहता है?' स्थितप्रज्ञ पुरुष मर्यादाओं को, जीवन की सीमाओं और सुख-दु:खों को आसानी से वहन कर सकता है। जैसे एक 'स्टेबलाइज़र' बिजली की गड़बड़ी को मर्यादा के अन्दर रखता है, उसी तरह मन के अन्दर भी एक स्टेबलाइज़र को रखना होगा, ताकि थोड़ा या ज्यादा दु:ख भी तुम्हें दु:खी न कर सके। राम जी के जीवन में भी तो दु:ख आया। उन्हें कितनी कठिनाइयाँ झेलनी पड़ीं। पहले वन जाने का आदेश हुआ, फिर पिता की मृत्यु और उसके बाद सीता का हरण। लेकिन राम जी सुख-दु:ख के प्रति तटस्थ रहे। कहने का तात्पर्य है स्थितप्रज्ञ व्यक्ति जीवन के असीमित सुख-दु:ख के उतार-चढ़ाव में बिल्कुल स्थिर और उद्वेगरहित होता है।

सीमाओं को जीतने के लिए तथा अपने जीवन में सन्तुलन लाने के लिए ही योगशास्त्र है। यदि शरीर लेकर आये हो तो सुख-दु:ख भोगना ही पड़ेगा। फर्क केवल इतना है –

देहधरे को दण्ड है, सब काहू को होय।
ज्ञानी भुगते ज्ञान सों, मूरख भुगते रोय॥

तुम ज्ञानियों की तरह ज्ञान के साथ संसार में जीवित रहो। अपनी शक्तियों को दु:ख के विचारों से नष्ट न होने दो। तुम जहाँ भी हो, वहीं से ऊपर उठकर एक श्रेष्ठ आदमी बनो। बस, यही योग का प्रमुख दृष्टिकोण है।

साधना की प्रक्रिया

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

महर्षि पतंजलि के योग सूत्रों में साधना की प्रक्रिया का वर्णन एक सारगर्भित सूत्र में किया गया है – *स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्काराऽऽसेवितो दृढ़भूमि:* । इस सूत्र का अनुवाद इस प्रकार किया जा सकता है – लम्बी अवधि तक अविराम एवं अनवरत रूप से निष्ठापूर्वक किये जानेवाले अभ्यासों से उनका ठोस आधार निर्मित होता है।

यह वह प्रमुख सूत्र है जिसकी शिक्षा प्रत्येक आध्यात्मिक साधक और जिज्ञासु को दी जानी चाहिये। किसी भी आध्यात्मिक या भौतिक साधना में पूर्णता की प्राप्ति के लिये तीन गुणों का होना आवश्यक है। उनमें से प्रथम है निष्ठा या दृढ़ विश्वास। यदि हम एक कारखाने में कार्य कर रहे हैं तब भी हमारा यह विश्वास होना चाहिये कि कार्य के द्वारा हम अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेंगे। इस विश्वास के बिना कार्य करने की अभिप्रेरणा नहीं हो सकती। आध्यात्मिक साधना के साथ भी यही बात लागू होती है। यह आस्था या दृढ़ विश्वास होना चाहिये कि 'हाँ, अपनी साधना के द्वारा मैं अवश्यमेव अपने लक्ष्य को प्राप्त करने जा रहा हूँ।' यह बात अप्रासंगिक है कि इस उपलब्धि में अधिक समय लगता है या कम।

निरन्तरता का तात्पर्य सातत्य या नियमितता से है। यह साधना का दूसरा पहलू है। जब हम अनुभव करते हैं कि किसी विशेष साधना के द्वारा हम अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकते हैं, तब हमें नियमित रूप से उसका अभ्यास करना चाहिये। अपने नियमित अभ्यास की उस अवधि में हम अपने मार्ग में आनेवाले किसी भी विक्षेप की उपेक्षा करने का प्रयास करते हैं। एक बार जब हम अपनी यात्रा प्रारम्भ करते हैं तब अपने लक्ष्य तक पहूँचने में कितना समय लगेगा, यह हमारे प्रयास की निरन्तरता पर निर्भर करता है। आप अपने मार्ग में बीस स्थानों पर विश्राम कर सकते हैं या अपनी यात्रा अविराम जारी रख सकते हैं। यदि हम अपने मार्ग में बीस स्थानों पर विश्राम करेंगे तो यात्रा पूरी करने में अधिक लम्बा समय लगेगा। लेकिन यदि हम अविराम चलते रहेंगे तो अपनी यात्रा शीघ्र ही पूरी कर लेंगे। अपने अभ्यास से पूर्ण लाभ प्राप्त करने हेतु अविराम निरन्तरता आवश्यक है।

अनेक लोग मेरे पास आते हैं और कहते हैं, 'स्वामीजी, मैं कई वर्षों से इस साधना का अभ्यास करता आ रहा हूँ, लेकिन कुछ प्राप्त नहीं कर सका हूँ।' मैं उनसे पूछता हूँ, 'आप किस प्रकार अभ्यास करते हैं?' वे कहते हैं कि मैं सप्ताह में एक बार अभ्यास करता हूँ।' मैं ऐसे लोगों से कहता हूँ, 'सप्ताह में एक दिन अभ्यास करने से आप एक कदम आगे बढ़ते हैं और शेष छ: दिनों तक अभ्यास न करने

से आप छ: कदम पीछे चले जाते हैं। इस स्थिति में किसी प्रकार की प्रगति की आशा आप कैसे कर सकते हैं?' इसलिए साधना में निरन्तरता और नियमितता अवश्य ही होनी चाहिये। जिस प्रकार हम जीवन के अनेक आवश्यक कार्यों के लिये समय निकाल लेते हैं ठीक उसी प्रकार हमें अपनी साधना का अभ्यास भी निरन्तर, नियमित रूप से करने हेतु समय निकालना चाहिये।

दीर्घकाल का अभिप्राय लम्बी कालावधि से है। यह साधना का तीसरा पहलू है जिसे लोग प्राय: स्थगित कर देते हैं। यदि हमें कोई कार्य लम्बी अवधि तक करना पड़े तो वह नीरस या उबाऊ हो जाता है। लेकिन हमें अधीरता या उपलब्धि की अपेक्षा के बिना अपने आध्यात्मिक अभ्यास के प्रति कटिबद्ध रहना चाहिये। हमें यह भी समझना चाहिये कि साधना के प्रति हमारा दृष्टिकोण उस इल्ली के समान हो जो अपना कार्य एक विशाल वृक्ष की एक छोटी पत्ती से प्रारम्भ करती है। हमारा उद्देश्य बाद में वृक्ष के केन्द्र तक पहुँचना हो सकता है, किन्तु प्रारम्भ में हम सीधे केन्द्र तक नहीं पहुँच सकते। इसके लिये एक भिन्न प्रकार की सजगता की आवश्यकता होती है। हमें एक इल्ली की तरह अपनी वर्तमान स्थिति से रेंगना शुरू करना है। वह एक पत्ती से गुजरती हुई एक छोटी टहनी तक पहुँचती है जो एक बड़ी शाखा से जुड़ी होती है और बड़ी शाखा वृक्ष के तने से जुड़ी होती है। तने का सीधा सम्बन्ध जड़ से होता है। हमारी मानसिकता, अपेक्षाएँ, जीवन या संसार हमारी पत्ती है तथा हम उस पत्ती को कुतर रहे हैं। वस्तुत: हम सभी इल्लियों की तरह अपनी पत्ती को कुतर रहे हैं। इस पत्ती से हमें मुख्य तने तक पहुँचना है और अन्ततोगत्वा केन्द्र को वेधने का प्रयास करना है। यही साधना की प्रक्रिया है।

नव वर्ष प्रार्थना

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

नव वर्ष के लिए आप सबको बहुत-बहुत मंगल कामना। भगवान से यही प्रार्थना करते हैं कि वे हमें जीवन में शक्ति और सकारात्मकता प्रदान करें ताकि हम पूरे मनोबल और उत्साह के साथ अपने जीवन के हर क्षेत्र में उत्तरोत्तर प्रगति कर सकें। सकारात्मकता और ऊर्जा ही जिंदगी में चुनौतियों को झेलने के लिये अस्त्र हैं। अगर मन सकारात्मक रहे तो विपरीत परिस्थिति में दु:खी नहीं होता। विपरीत परिस्थितियाँ आती हैं, हम उन्हें झेलते हैं लेकिन दु:खी नहीं होते। यह है सकारात्मकता का परिणाम। और जब ऊर्जा रहती है तो हम अपने कार्यों को निर्विघ्न सम्पन्न कर पाते हैं, बिना किसी परेशानी के। अगर ऊर्जा नहीं तो एक छोटा-सा काम भी कठिन प्रतीत होता है। व्यक्ति एक पत्ता भी नहीं उठा सकता है जो उसके सामने गिरा हुआ है। लेकिन अगर ऊर्जा है तो हम हनुमान जी जैसे हो सकते हैं जिन्होंने एक औषधि के बदले पूरे पर्वत को लाकर रख दिया था। शक्ति आवश्यक है। शक्ति के बिना शरीर शव है और शक्ति से जुड़ जाये तो शरीर शिव है।

इस तरह शक्ति और सकारात्मकता, ये दोनों हमारे जीवन में अपने विचार, व्यवहार और संबंध को अच्छा बनाने के लिये और अपने व्यावहारिक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये आवश्यक हैं। जब यह प्राप्त होता है तो मनुष्य स्वत: धर्म की ओर आकर्षित होता है। धर्म का मतलब कर्मकाण्ड या पूजा-पाठ नहीं, बल्कि जब मनुष्य के जीवन में अच्छे व्यवहार और कर्म सम्पन्न होते हैं, जिनका आधार प्रकाश और सत्त्व है, उसी को धर्म और जीवन की उत्तम अवस्था मानते हैं। शक्ति और सकारात्मकता के माध्यम से सबके लिये नया वर्ष मंगलमय हो, यही हम सबकी प्रार्थना है। हरि: ॐ तत्सत्।

– 1 जनवरी 2021, गंगा दर्शन

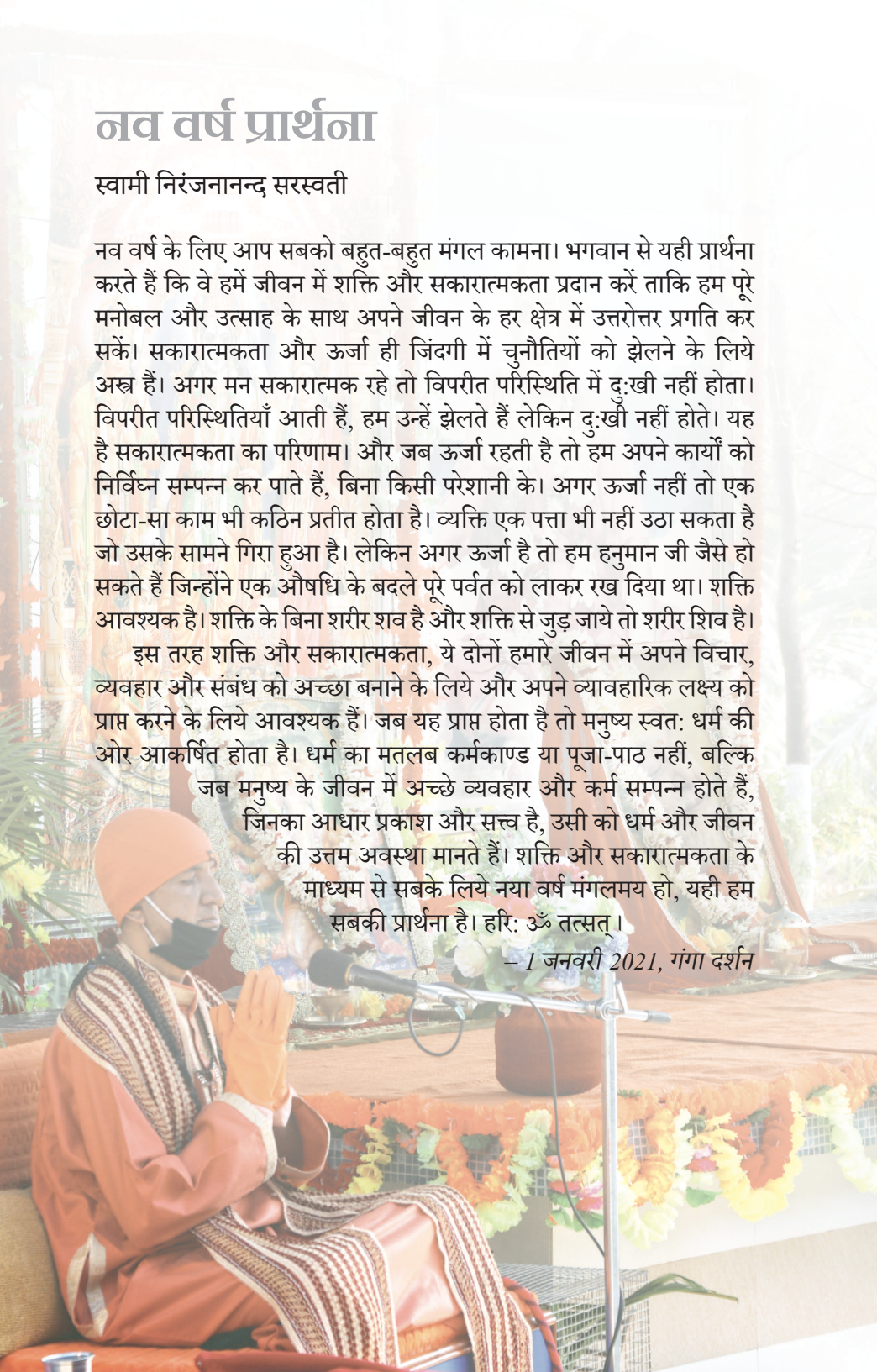

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

योग दर्शन

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

पृष्ठ 465, ISBN: 978-81-85797-97-7

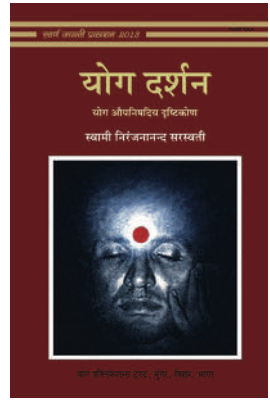

उपलब्ध

इस पुस्तक में योग की समग्र और प्रामाणिक रूपरेखा के साथ-साथ सम्पूर्ण आध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक पक्षों की भी विवेचना की गई है। सैद्धान्तिक भाग में हठयोग, राजयोग, मन्त्रयोग, कर्मयोग, ज्ञानयोग, लययोग और गुह्ययोग के विस्तृत वर्णन के साथ-साथ योग की विभिन्न परम्पराओं और दर्शनों का उल्लेख किया गया है। व्यावहारिक भाग में योग उपनिषदों के उत्कृष्ट अभ्यासों, सामान्य बुद्धि योग, समग्रात्मक शरीर विज्ञान, रोग के कारण एवं स्वास्थ्य की यौगिक व्याख्या की गई है।

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें –
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु, पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201
दूरभाष : 91–6344–222430, 9162783904

जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा

वेबसाइट और एप्प

www.biharyoga.net
बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट पर बिहार योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

सत्यम् योग प्रसाद
बिहार योग परम्परा की समस्त प्रकाशित कृतियाँ *satyamyogaprasad.net* वेबसाइट पर तथा *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में प्रस्तुत हैं।

यौगिक जीवनशैली साधना
biharyoga.net तथा *satyamyogaprasad.net* पर स्वस्थ जीवन हेतु यौगिक जीवनशैली साधना उपलब्ध है।

योगा एवं योगविद्या ऑनलाइन
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yoga-magazines/
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yogavidya/
योगा एवं योगविद्या पत्रिकाएँ *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में भी उपलब्ध हैं।

अन्य एप्प (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)
- योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की लोकप्रिय पुस्तक, ए.पी.एम.बी. अब सुविधाजनक एप्प के रूप में उपलब्ध है
- *Bihar Yoga* एप्प साधकों के लिए प्राचीन और नवीन यौगिक ज्ञान आधुनिक ढंग से पहुँचाता है
- *For Frontline Heroes* एप्प कोरोनावायरस के विरुद्ध अभियान में संघर्षरत कार्यकर्ताओं के लिए सरल योग अभ्यास प्रस्तुत करता है जो महामारी से उत्पन्न तनाव को सम्हालने में सहायक हैं

- Registered with the Department of Post, India
  Under No. MGR-01/2020-23
  Office of posting: Ganga Darshan TSO
  Date of posting: 1st–7th of every month
- Registered with the Registrar of Newspapers, India
  Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

सभी ग्राहकों के लिए महत्त्वपूर्ण सूचना

आत्मस्वरूप

हरि: ॐ

हमें यह सुखद समाचार देते हुए हर्ष हो रहा है कि जनवरी 2021 से मासिक योगा (अंग्रेज़ी) तथा योगविद्या (हिन्दी) पत्रिकाएँ सभी ग्राहकों, सहयोगियों, योगप्रेमियों, भक्तों तथा आध्यात्मिक साधकों के लिए निम्नांकित वेबसाइटों पर नि:शुल्क उपलब्ध रहेंगी –

www.satyamyogaprasad.net

www.biharyoga.net

वर्तमान कोरोनावायरस महामारी और उससे उत्पन्न अनिश्चितता के कारण योगा और योगविद्या की प्रकाशित प्रतियाँ 2021 में ग्राहकों के लिए उपलब्ध नहीं रहेंगी। इसलिए 2021 में इन पत्रिकाओं के लिए नए सदस्यता आवेदन या पुरानी सदस्यता को बढ़ाने के आवेदन स्वीकार **नहीं** किए जा रहे हैं। अत: इन पत्रिकाओं के लिए सदस्यता आवेदन **मत** भेजिए।

पत्रिकाओं सम्बन्धी परिस्थिति की जानकारी आपको समय-समय पर मिलती रहेगी।

इस बीच श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती और श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती की शिक्षाओं को ग्रहण कर उन्हें अपनी दिनचर्या में आत्मसात् एवं अभिव्यक्त कीजिये ताकि आपका जीवन उदात्त और उन्नत बन सके।

आपके स्वास्थ्य, कल्याण और शांति के लिए श्री स्वामी सत्यानन्द जी के आशीर्वाद सहित,

ॐ तत्सत्

सम्पादक